ॐ

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

वर्णविज्ञाने शिक्षार्थी-सूत्रम्

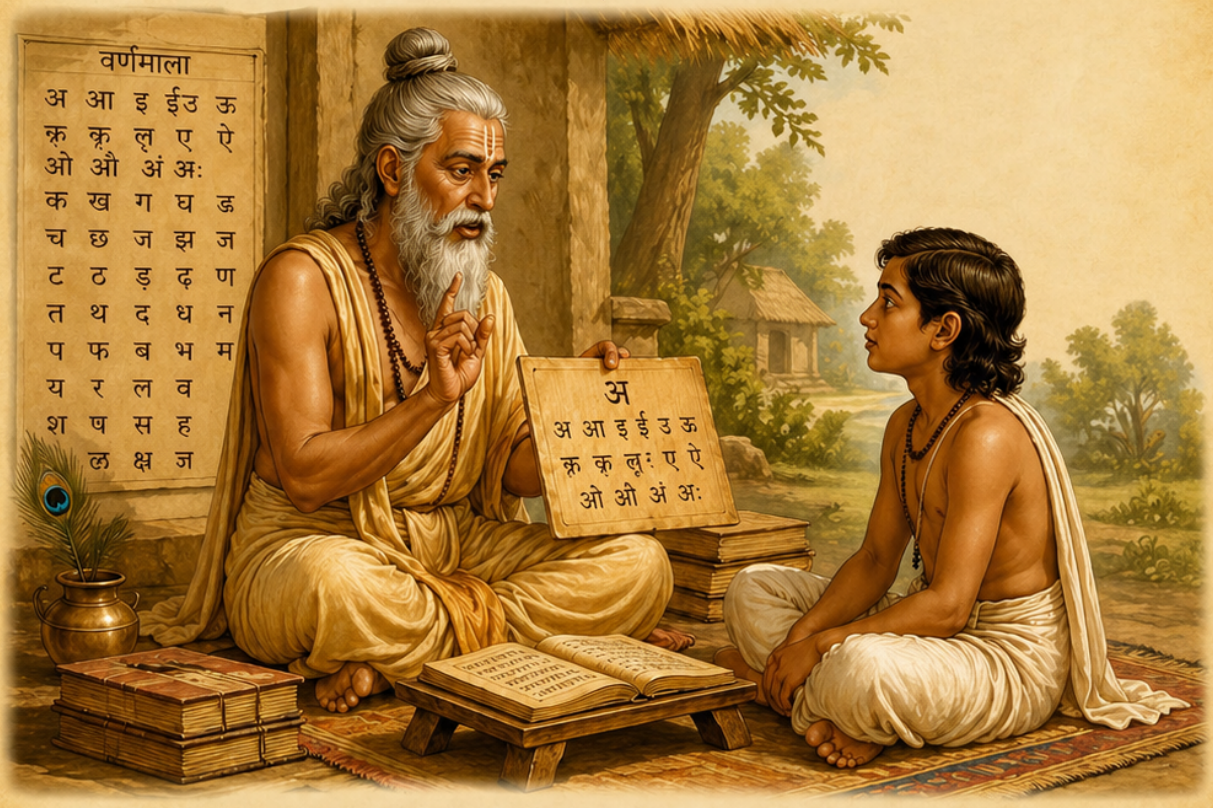

ध्वनि-वर्ण-लिपि-विज्ञानस्य शिक्षार्थिनां कृते सूत्रग्रन्थः

प्रणम्य गुरुमूर्तिं तां
वान्देवीं सरस्वतीम् ।
वर्णविज्ञानसिद्ध्यर्थं
शिक्षार्थी-सूत्रमीर्यते ॥

रचयिताः

निरर्वजन प्रधानः

विक्रमसंवत् २०८२-८३ ओडिशा, भारत

सूची-पत्र

भूमिका.....**१-३** (1-3**)**

Preface..... **४-५ (**4-5**)**

१. **गुरु-महिमापादः**(Guru-Mahima Section).....**६-१७** (6-17)

२. उच्चारण-पादः(Pronunciation Section)..... **१८-३८** (18-38)

३. कण्ठस्थ-पादः(Memorisation section)..... **३९- ४३** (39-43)

४. स्वाध्याय-विधि-पादः(Svādhyāya-Vidhi Section)..... **४४-४६ (** 44-46)

५. दैनिककार्य-पादः(Daily Practice Section).....**४७-५३ (**47-53)

Bibliography.....**५४ (54)**

भूमिका

॥ वर्णशिक्षा-आधारित अनुप्रयुक्त-ग्रन्थस्य भूमिका ॥

भारतीय ज्ञान-परम्परा विश्व की उन महानतम परम्पराओं में से है, जहाँ ज्ञान को केवल सैद्धान्तिक सूचना नहीं, बल्कि एक जीवित, अनुभवात्मक एवं अनुशासनात्मक साधना-प्रणाली के रूप में स्वीकार किया गया है। इस परम्परा में ज्ञान का प्रवाह पुस्तकों से अधिक गुरु-शिष्य सम्बन्ध के माध्यम से होता है, जहाँ गुरु ज्ञान का दीपक और शिष्य उस प्रकाश का वाहक होता है।

वर्णविज्ञान का मूल उद्देश्य केवल वर्णों का परिचय देना नहीं है, बल्कि यह स्पष्ट करना है कि प्रत्येक ध्वनि का अपना निश्चित स्थान, करण और प्रयत्न होता है। इन तीनों के शुद्ध ज्ञान के बिना उच्चारण की शुद्धता सम्भव नहीं होती, और शुद्ध उच्चारण के बिना अर्थ की पूर्णता भी प्राप्त नहीं होती। अतः भाषा का वास्तविक सौन्दर्य केवल शब्दों में नहीं, बल्कि उनके शुद्ध ध्वनि-रूप में निहित है।

इस ग्रन्थ की रचना इसी आधारभूत सिद्धान्त पर की गई है कि ज्ञान का आरम्भ गुरु से होता है और उसकी सिद्धि निरन्तर अभ्यास, अनुशासन और आत्म-अनुभव से प्राप्त होती है। गुरु के बिना प्राप्त ज्ञान प्रायः अपूर्ण, भ्रमयुक्त अथवा अस्थिर हो सकता है, जबकि गुरु के मार्गदर्शन में वही ज्ञान व्यवस्थित, शुद्ध और फलदायक बन जाता है।

इसी कारण भारतीय परम्परा में गुरु को केवल शिक्षक नहीं, बल्कि ज्ञान का जीवित स्रोत माना गया है। माता, पिता और गुरु—इन तीनों का ऋण कभी पूर्ण रूप से चुकाया नहीं जा सकता, क्योंकि ये तीनों जीवन, संस्कार और ज्ञान के आधार स्तम्भ हैं।

॥ इस ग्रन्थ की रचना का उद्देश्य ॥

यह ग्रन्थ विशेष रूप से उन छात्रों एवं जिज्ञासुओं के लिए रचा गया है, जो वर्णशिक्षा के मूल सिद्धान्तों को केवल पढ़ना नहीं, बल्कि उन्हें समझना, अनुभव करना और व्यवहार में उतारना चाहते हैं।

यह केवल सैद्धान्तिक ग्रन्थ नहीं है, बल्कि एक अनुप्रयुक्त (Applied) शिक्षण-प्रणाली है, जो मूल वर्णशिक्षा को जीवन में प्रयोग करने की विधि प्रदान करती है।

इसलिए इसका महत्त्व केवल सहायक ग्रन्थ के रूप में नहीं, बल्कि मूल शास्त्र के व्यावहारिक विस्तार के रूप में भी स्वीकार किया गया है।

इस ग्रन्थ में चार प्रमुख पादों का समावेश किया गया है, जो सम्पूर्ण शिक्षण को क्रमबद्ध एवं व्यावहारिक रूप प्रदान करते हैं—

१. गुरु-महिमापादः

इस भाग में गुरु के महत्व, उसकी अनिवार्यता तथा ज्ञान-प्रवाह में उसकी भूमिका का वर्णन किया गया है, क्योंकि बिना गुरु के ज्ञान केवल सूचना मात्र रह जाता है।

२. उच्चारण-पादः

इसमें स्वर, व्यञ्जन, संयुक्ताक्षर एवं उनके दोषों का वैज्ञानिक एवं शास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है, जिससे शुद्ध उच्चारण का अभ्यास सम्भव हो सके।

३. कण्ठस्थ-पादः

इस भाग में स्मरण, पुनरावृत्ति एवं कण्ठस्थ अभ्यास की विधि बताई गई है, क्योंकि केवल समझ पर्याप्त नहीं, ज्ञान की स्थिरता आवश्यक है।

४. स्वाध्याय-विधि-पादः

इस भाग में स्वाध्याय (स्व-अध्ययन) की विधि, अनुशासन, एकाग्रता एवं निरन्तर अभ्यास का वर्णन किया गया है, जिससे विद्यार्थी स्वयं अपने ज्ञान को परिष्कृत और दृढ़ कर सके तथा गुरु-निर्देश के अनुसार आत्मनिर्भर अध्ययन की क्षमता विकसित कर सके।

५. दैनिककार्य-पादः

इसमें नित्य अभ्यास, अनुशासन, समय-नियम एवं साधना का वर्णन किया गया है, जिससे ज्ञान केवल अध्ययन तक सीमित न रहकर जीवन का अंग बन सके।

॥ उपग्रन्थ-समावेशस्य कारणम् ॥

इन उपग्रन्थों को जोड़ने का प्रमुख कारण यह है कि वर्णशिक्षा केवल सैद्धान्तिक विषय नहीं है, बल्कि यह एक व्यावहारिक एवं साधनात्मक विज्ञान (Applied Science) है।

इसलिए इसे केवल मूल ग्रन्थ तक सीमित न रखकर, इसके व्यावहारिक पक्ष को स्पष्ट करने हेतु अलग संरचना दी गई है, जिससे साधक केवल ज्ञान अर्जित न करे, बल्कि उसे अपने जीवन में उतार सके।

इस प्रकार यह ग्रन्थ मूल वर्णशिक्षा का विरोधी नहीं, बल्कि उसका विस्तारित एवं अनुप्रयुक्त रूप है।

यह ग्रन्थ श्रद्धापूर्वक **स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती जी** को समर्पित है, जिनके सान्निध्य में मुझे उच्चारण आदि विषयों का अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वे संन्यासी होते हुए भी **पाणिनि महाविद्यालय, सोनीपत (हरियाणा)** में अध्ययनरत रहे और ज्ञान-परम्परा को निरन्तर आगे बढ़ाते रहे।

साथ ही, मैं **स्वर्गीय श्री विजयपाल विद्याभारती जी** के प्रति अपनी गहरी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ, जिनकी **प्रेरणा एवं मार्गदर्शन** से मुझे यह अध्ययन प्राप्त हुआ।

आधुनिक समय में भाषा एवं उच्चारण पर बढ़ते बाह्य प्रभावों के बीच, उन्होंने हम जैसे छात्रों को अत्यन्त स्नेह, धैर्य और करुणा के साथ शिक्षा प्रदान की तथा हमारी त्रुटियों का सुधार करते हुए सही मार्गदर्शन दिया।

इस ग्रन्थ के माध्यम से मैं उनके प्रति अपनी हार्दिक श्रद्धा एवं कृतज्ञता अर्पित करता हूँ।

यह ग्रन्थ वर्तमान में केवल एक **प्रारम्भिक संकलन (draft / sankalana)** रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। इसका उद्देश्य किसी अंतिम अथवा पूर्णतया परिष्कृत ग्रन्थ के रूप में दावा करना नहीं है, बल्कि विभिन्न सूत्रों, सिद्धान्तों एवं अभ्यास-पद्धतियों को एकत्रित कर क्रमबद्ध रूप देना है। आगे चलकर विद्वानों के परीक्षण, समीक्षा एवं परिष्कार के आधार पर इसमें आवश्यक संशोधन एवं सुधार किया जाएगा, जिससे इसका अंतिम रूप अधिक शुद्ध, व्यवस्थित एवं शास्त्रीय परम्परा के अनुरूप हो सके।

॥ उपसंहार ॥

अन्ततः यह कहा जा सकता है कि यह ग्रन्थ उस शाश्वत परम्परा का स्मरण है जिसमें गुरु ही ज्ञान के स्रोत हैं और शिष्य उस ज्ञान के संवाहक। इसका उद्देश्य केवल अध्ययन नहीं, बल्कि शुद्ध उच्चारण, स्पष्ट स्मरण और अनुशासित अभ्यास के माध्यम से ज्ञान को जीवन में स्थापित करना है।**"यह एक सुव्यवस्थित प्रारम्भिक ग्रन्थ-संकलन है, जो आगे विद्वत् समीक्षा के पश्चात् परिष्कृत किया जाएगा।"**

यह ग्रन्थ उन सभी जिज्ञासुओं के लिए है, जो परम्परा को केवल सुनना नहीं, बल्कि उसे समझना, जीना और आगे बढ़ाना चाहते हैं।

– श्री निरंजन प्रधान,

संस्कृत ध्वनिशास्त्र-अध्ययनकारी,

ब्रह्मपुर, ओडिशा

Preface

‖ Preface of the Applied Text Based on Varnashiksha ‖

The Indian tradition of knowledge is one of the most ancient and profound systems in the world, where knowledge is not merely considered theoretical information, but a living, experiential, and disciplined process. In this tradition, the flow of knowledge is transmitted more through the Guru–Shishya (teacher–disciple) relationship than through books alone, where the Guru is regarded as the lamp of wisdom and the disciple as the receiver and carrier of that light.

The essence of Varnashastra (science of sounds and letters) is not limited to the identification of alphabets, but it explains that every sound has a specific place of articulation, organ of articulation, and effort of pronunciation. Without proper understanding of these three, correct pronunciation is not possible, and without correct pronunciation, complete meaning cannot be achieved. Therefore, the true beauty of language lies not merely in words, but in their pure and precise sound structure.

This text has been composed on the foundational principle that knowledge begins with the Guru and attains perfection through continuous practice, discipline, and experiential learning. Knowledge acquired without a Guru may remain incomplete, unstable, or even misleading, whereas the same knowledge, when guided by a Guru, becomes structured, pure, and fruitful.

For this reason, in the Indian tradition, the Guru is not merely a teacher, but a living source of knowledge. The debts owed to mother, father, and Guru can never be fully repaid, as they are the fundamental pillars of life, values, and wisdom.

‖ Purpose of This Text ‖

This work is specially intended for students and seekers who wish not only to study the principles of Varnashiksha but also to understand, experience, and apply them in practice.

This is not merely a theoretical treatise but an applied system of learning, which transforms the principles of Varnashiksha into practical methodology.

Therefore, its significance is not limited to being a supplementary text, but it also serves as a practical extension of the original science.

This text is structured into four main sections, each designed to provide systematic and practical understanding:

1. Guru-Mahima Section

This section explains the importance of the Guru, his role in knowledge transmission, and the necessity of guidance, as knowledge without a Guru remains incomplete.

2. Pronunciation Section

This part deals with vowels, consonants, conjunct letters, and their defects in a scientific and structured manner, enabling correct pronunciation.

3. Memorization Section

This section explains repetition, retention, and memory techniques, emphasizing that understanding alone is not sufficient; stability of knowledge is essential.

4. Svādhyāya-Vidhi-Pādaḥ
This section describes the method of self-study (svādhyāya), discipline, concentration, and continuous practice, through which the learner can refine and strengthen their knowledge

independently and develop the ability for self-directed study in accordance with the guidance of the guru.

5. Daily Practice Section

This section focuses on discipline, routine practice, and daily learning methods so that knowledge becomes a part of life rather than remaining theoretical.

‖ Reason for Making It a Separate Applied Text ‖

These sub-sections are included because Varnashiksha is not merely a theoretical subject, but an applied science of language and sound.

Therefore, instead of limiting it to the original theoretical framework, this work extends it into a practical system, enabling learners to not only acquire knowledge but also apply it in real practice.

Thus, this text is not a replacement of the original scripture but its extended and applied form.

This work is respectfully dedicated to **Swami Brahmananda Saraswati**, under whose guidance I had the privilege of studying pronunciation and related subjects. Even while being in the state of renunciation, he continued his studies at the **Panini Mahavidyalaya, Sonipat (Haryana)** and consistently contributed to the preservation and continuation of the knowledge tradition.

I also express my deep gratitude to the **late Shri Vijayapal Vidyabharati**, whose inspiration and guidance enabled me to pursue this study.

In an age increasingly influenced by external distortions in language and pronunciation, he taught students like me with great affection, patience, and compassion, correcting our mistakes and guiding us towards proper understanding.

Through this work, I humbly offer my heartfelt respect and gratitude to both of them.

This work is currently presented in the form of a preliminary draft (sankalana / collection). Its purpose is not to claim it as a final or fully refined treatise, but to systematically compile various aphorisms, principles, and practical methods related to the subject. It is intended as a foundational structure that will later be reviewed, examined, and refined through scholarly feedback and critical evaluation. Based on such review and necessary corrections, the final form of the text will be further improved to make it more accurate, systematic, and aligned with traditional scholarly standards.

‖ Conclusion ‖

In conclusion, this work is a reminder of the eternal tradition in which the Guru is the source of knowledge and the disciple is its carrier. The aim of this text is not merely study, but the establishment of knowledge in life through correct pronunciation, clear memory, and disciplined practice.

This text is dedicated to all seekers who do not wish to merely read tradition, but to understand it, live it, and carry it forward.

— Shree Niranjan Pradhan,

Student of Sanskrit Phonetics,

Brahmapur, Odisha

शिक्षार्थिसूत्रम्

सूत्र १ – गुरोः अध्ययनाभ्यासाभ्यां वर्णज्ञानप्राप्तिः॥

हिंदी : गुरु से अध्ययन और अभ्यास के द्वारा वर्णों का ज्ञान प्राप्त होता है।

यह सूत्र *वर्णशिक्षा* के मूल ग्रंथ के प्रथम अध्याय, सप्तम पाद का ३७वाँ सूत्र है। इसी सूत्र के आधार पर इस अध्याय के अध्ययन-उपग्रंथ का निर्माण किया गया है।

English : Knowledge of phonemes (letters/sounds) is attained through study and practice under a teacher.

English: This sūtra is the 37th aphorism of the 7th section (pāda) in the first chapter of the foundational text *Varṇa-Śikṣā*. Based on this sūtra, the present study-subtext (auxiliary treatise) of this chapter has been composed.

सूत्र २ – गुरुमुखाद् विद्या प्रवहति।

हिंदी : गुरु के मुख से ही विद्या का प्रवाह होता है; अर्थात् सच्चा ज्ञान गुरु-परम्परा से ही प्रसारित होता है।

English : Knowledge flows from the mouth of the teacher; that is, true learning is transmitted through the lineage of the guru.

सूत्र ३ – श्रुतिः गुरुवचनेन शुद्ध्यति।

हिंदी : श्रुति गुरु के वचन द्वारा शुद्ध होती है; अर्थात् शास्त्रज्ञान गुरु के उपदेश से ही परिशुद्ध और यथार्थ बनता है।

English : Scriptural hearing (śruti) is purified through the words of the teacher; that is, knowledge of the sacred texts becomes refined and authentic through the guidance of the guru.

सूत्र ४ – उच्चारणदोषो गुरुदर्शनेन निवर्तते।

हिंदी : उच्चारण का दोष गुरु के दर्शन (संपर्क एवं मार्गदर्शन) से दूर हो जाता है; अर्थात् सही उच्चारण गुरु के प्रत्यक्ष निर्देशन से ही सिद्ध होता है।

English : Errors in pronunciation are removed through the guidance (presence and instruction) of the teacher; that is, correct articulation is attained under the direct supervision of a guru.

सूत्र ५ – संशयः गुरुप्रश्नेन छिद्यते।

हिंदी :संशय गुरु से प्रश्न करने द्वारा छिन्न (नष्ट) हो जाता है; अर्थात् जिज्ञासा और शंका का समाधान गुरु से संवाद द्वारा ही संभव है।

English : Doubt is dispelled by questioning the teacher; that is, uncertainty is resolved through inquiry directed to the guru.

सूत्र ६ – गुरुसेवया विद्या स्थिरा भवति।

हिंदी :गुरु की सेवा से विद्या स्थिर हो जाती है; अर्थात् विनय, सेवा और श्रद्धा के द्वारा प्राप्त ज्ञान दृढ़ एवं स्थायी बनता है।

English : Through service to the teacher, knowledge becomes firm and steady; that is learning becomes stable and enduring through humility, service, and devotion to the guru.

सूत्र ७ – *गुरुमुखलब्धा विद्या अल्पकालेन सिद्ध्यति, सा स्वप्रयासेन बहुकालेनापि न सिद्ध्यति॥*

हिन्दी : गुरु के मुख से प्राप्त विद्या थोड़े समय में सिद्ध हो जाती है, वही विद्या अपने प्रयास से बहुत समय में भी सिद्ध नहीं होती।

English : Knowledge obtained from the teacher is perfected in a short time; the same knowledge is not accomplished even in a long time through one's own effort.

सूत्र ८ – गुरुवाक्यं सारमात्रं ददाति। ग्रन्थस्तु सारासारमिश्रितः।।

हिन्दी : गुरु का वचन केवल सार (मुख्य तत्व) ही देता है, जबकि ग्रन्थ (पुस्तक) सार और असार दोनों से मिश्रित होता है।

English : The teacher's words convey only the essence, whereas a text (book) contains a mixture of both essential and non-essential elements.

सूत्र ९ – स्वप्रयासी मार्गं विन्दति, गुरुशिष्यस्तु लक्ष्यं प्राप्नोति।

हिन्दी: स्वयं प्रयास करने वाला मार्ग खोजता है, परन्तु गुरु का शिष्य लक्ष्य को प्राप्त करता है।
English: One who strives alone finds the path, but the disciple of a teacher attains the goal.

सूत्र १० – यावद् विषयं स्वयं न बुध्यते, तावद् गुरुसमीपेऽधीयीत॥

हिन्दी : जब तक विषय स्वयं समझ में न आए, तब तक गुरु के समीप अध्ययन करना चाहिए।

English : As long as a subject is not understood by oneself, one should study in the presence of the teacher.

सूत्र ११ – यदा स्वयं विषयं बुध्यते, तदा गुरोः शिष्योऽपि लोकस्य गुरुः भवति॥

हिन्दी : जब कोई स्वयं विषय को *समझने लगे,* तब वह गुरु का शिष्य भी लोक (समाज) का गुरु बन जाता है।

English : When one understands a subject by oneself, then the disciple of the teacher becomes a teacher of the world (society).

सूत्र १२ – ज्ञाने वृद्धेऽपि गुरुशिष्यसम्बन्धोऽक्षयः॥

हिन्दी : ज्ञान बढ़ जाने पर भी गुरु-शिष्य सम्बन्ध अक्षय रहता है।

English : Even when knowledge increases, the bond between teacher and disciple remains imperishable.

सूत्र १३ – परम्परा तदा प्रवहति यदा शिष्यः गुरुर्भवति।

हिन्दी : परम्परा तभी प्रवाहित होती है, जब शिष्य स्वयं गुरु बनता है।

English : Tradition flows only when the disciple becomes a teacher.

॥ गुरु महत्त्वम् ॥

***सूत्र १४* – गुरुं विना न विद्या स्यात्, गुरुर्ज्ञानप्रदीपकः । माता पिता गुरुश्चैव, तेषाम् ऋणं नैव विमुच्यते ॥ वेदानुकूलं गुरुवाक्यं प्रमाणमेवोच्यते। तदनुसारं शिष्यः सदा कृतज्ञतया समाचरेत्॥**

हिन्दी :गुरु के बिना विद्या नहीं होती–गुरु ज्ञान का दीपक है। माता, पिता और गुरु का ऋण कभी भी चुकाया नहीं जा सकता।वेद के अनुकूल गुरु का वचन ही प्रमाण माना जाता है। शिष्य को हिए कि वह सदैव कृतज्ञता के साथ उसी के अनुसार आचरण करे।

English : Without a teacher, there is no knowledge—the teacher is the lamp of wisdom. The debt owed to mother, father, and teacher can never be repaid. The teacher's words, when aligned with the Vedas, are considered authoritative. A disciple should always act accordingly, with gratitude.

॥ गुरोः समीपं कथं गच्छेम? ॥

सूत्र १५ – वर्णविज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् – जिज्ञासासमित्पाणिः श्रोत्रियं शाब्दब्रह्मनिष्ठम्॥ [1]

हिन्दी :वर्णविज्ञान (ध्वनि और वर्ण के ज्ञान) की प्राप्ति के लिए मनुष्य को केवल गुरु के पास जाना चाहिए –

जो जिज्ञासा रूपी समिधा (समर्पण और श्रद्धा) हाथ में लिए हुए हो, और ऐसा गुरु हो जो शास्त्रज्ञ (श्रोत्रिय) तथा शब्द-ब्रह्म में स्थित (निष्ठावान) हो।

---

1 *.तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्॥* मुण्डकोपनिषद् (१.२.१२)

English : For the attainment of knowledge of phonetics (Varna-Vijnana), one must approach a Guru alone —

with a spirit of inquiry and humility (symbolized by holding sacrificial fuel), and the Guru should be well-versed in scriptures (Śrotriya) and established in the realization of the Word-Brahman.

॥ सत्गुरोः लक्षणम् ॥

सूत्र १६ – श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठसमन्वयो गुरुलक्षणम् ॥

वृत्ति : श्रोत्रियः शब्दसामर्थ्यं ददाति, ब्रह्मनिष्ठस्तत्त्वं प्रकाशयति। उभयोः समन्वयेन शिष्यः शब्दतत्त्वयोः साक्षात्कारं लभते॥

हिन्दी : श्रोत्रिय गुरु (जो शास्त्रज्ञ है) शब्द की शक्ति और सही अर्थ का ज्ञान देता है, और ब्रह्मनिष्ठ गुरु (जो अनुभवी है) तत्त्व का प्रत्यक्ष प्रकाश करता है। इन दोनों के समन्वय से शिष्य शब्द और तत्त्व–दोनों का साक्षात्कार प्राप्त करता है।

English : A Śrotriya (scripturally learned teacher) imparts the power and proper understanding of words, while a Brahmaniṣṭha (one established in realization) reveals the ultimate truth.Through the harmony of both, the disciple attains direct realization of both word and essence.

सूत्र १७ – अनाचाराज्ञानयोः सति गुरुपरित्यागो धर्मः, अन्यथा नैव॥

अर्थ – अनाचार और अज्ञान होने पर गुरु-परित्याग धर्म है, अन्यथा कदापि नहीं।

वृत्ति *:यस्य गुरोः आचारः दुष्टः, ज्ञानं वा शिष्यहिताय न भवति, तं परित्यज्य अन्यं श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठं गुरुं शिष्यः आश्रयेत्। अकारणं परित्यागस्तु शिष्यस्य पतनाय।*

हिन्दी : जिस गुरु का आचरण दूषित हो, या जिसका ज्ञान शिष्य के हित में न हो, ऐसे गुरु को त्यागकर शिष्य को दूसरे श्रोत्रिय और ब्रह्मनिष्ठ गुरु का आश्रय लेना चाहिए। परन्तु बिना कारण गुरु का त्याग करना शिष्य के पतन का कारण बनता है।

English: If a teacher’s conduct is corrupt, or if his knowledge does not benefit the disciple,the disciple should leave him and seek another Guru who is both learned (Śrotriya) and realized (Brahmaniṣṭha).However, abandoning a Guru without valid reason leads to the downfall of the disciple.

सूत्र १८ – अनाचाराज्ञानयोः सति संशयेन विद्वत्परामर्शेन च निश्चित्य, मौनेन अन्यं गुरुमाश्रयेत् – निन्दां वर्जयित्वा॥

हिन्दी : जब गुरु में अनाचार या अज्ञान का संदेह उत्पन्न हो, तो विद्वानों से परामर्श करके उसे निश्चित कर लेना चाहिए।फिर बिना निन्दा किए, मौनपूर्वक दूसरे गुरु का आश्रय लेना चाहिए।

English : If there arises doubt regarding a teacher's misconduct or ignorance, one should ascertain it through consultation with learned persons. Then, without criticism, one should silently seek another Guru.

सूत्र १९ – अनध्यायो वदेद्यस्तु गुरोर्वाक्यं न मन्यते। तं विद्यात् पतितं शिष्यं परित्याज्यं विचक्षणैः॥ [2]

वृत्ति : *यः शिष्यः अध्ययनं विहाय केवलं वाचालतां करोति, गुरोः उपदेशं न श्रृणोति, न पालयति – सः **पतितः** – अर्थात् विद्यामार्गात् च्युतः। तादृशं शिष्यं **विचक्षणाः गुरवः** परित्यजन्ति – न क्रोधेन, न द्वेषेण – किन्तु धर्मरक्षणाय, विद्यारक्षणाय च। यतः अपात्रे विद्यादानं विद्यायाः अपमानम्॥*

हिन्दी :

जो शिष्य –

- **अध्ययन छोड़कर** केवल बातें करता रहे
- **गुरु के वचन** को न माने, न आचरण में लाए
- ज्ञान लेने आया हो पर **श्रद्धा शून्य** हो

– ऐसे शिष्य को मनु "**पतित**" कहते हैं।

पतित का अर्थ यहाँ नैतिक पतन नहीं – **विद्यामार्ग से च्युत** होना है। और ऐसे शिष्य को **विचक्षण गुरु** – अर्थात् जो सच्चे विद्वान हैं – **त्याग देते हैं।**

: वर्ण-विज्ञान **गुरुमुखी विद्या** है – यदि शिष्य गुरु-वचन न माने तो वर्ण का सूक्ष्म ज्ञान उसे कभी नहीं मिलेगा। अतः यह श्लोक **गुरु-प्रकरण** में अत्यन्त उचित प्रमाण है।

सूत्र २० – वचनेन मौनेन स्पष्टोक्त्या विसर्जनेन च – क्रमशः अपात्रं परित्यजेत्॥

वृत्ति :गुरुः अपात्रं शिष्यं सहसा न परित्यजेत्। क्रमेण चतुर्भिः उपायैः परित्यागः कर्तव्यः –

प्रथमं **वचनेन** – गुरुः शिष्यं सावधानं करोति। "वत्स, तव अध्ययनं शिथिलम्, श्रद्धा च न्यूना" इति स्पष्टं वदेत्। शिष्यः यदि बोधं प्राप्नोति – परित्यागस्य आवश्यकता नास्ति।

द्वितीयं **मौनेन** – यदि वचनेन न बोधः, तदा गुरुः अध्यापनं निवर्तयति – मौनं धारयति। मौनमेव गुरोः सन्देशः – "विचारय, किं करोषि।"

तृतीयं **स्पष्टोक्त्या** – यदि मौनेनापि न बोधः, तदा गुरुः स्पष्टं वदेत् – "त्वं अस्याः विद्यायाः अपात्रोऽसि। अन्यत्र गच्छ, अन्यं मार्गं अन्वेषय।" इदं कठोरं किन्तु करुणामयम्।

2 मनुस्मृति २.११४-११५

चतुर्थं **विसर्जनेन** – यदि एतैः त्रिभिः उपायैः अपि न परिवर्तनम्, तदा गुरुः विधिवत् विसर्जयति – न शापेन, न क्रोधेन – "गच्छ वत्स, तव मार्गः अन्यत्र अस्ति" इति आशीर्वादेन।

क्रमशः इति पदं अत्र प्रधानम् – एकमपि क्रमं उल्लङ्घ्य परित्यागः अधर्मः। गुरोः धैर्यं करुणा च एतेन क्रमेण सिद्ध्यति॥

हिन्दी : गुरु किसी भी शिष्य को अचानक नहीं त्यागता – शास्त्र ने चार क्रम बताए हैं –

पहला – वचन से गुरु शिष्य को स्पष्ट शब्दों में सावधान करता है – *"तुम्हारी श्रद्धा कम हो रही है, अध्ययन शिथिल है।"* यदि शिष्य समझ जाए – बात यहीं समाप्त।

दूसरा – मौन से यदि वचन से न समझे – गुरु अध्यापन बन्द कर देता है। मौन ही सन्देश है – *"सोचो, क्या कर रहे हो।"*

तीसरा – स्पष्टोक्ति से यदि मौन से भी न समझे – गुरु सीधे कह देता है – *"तुम इस विद्या के अपात्र हो, अन्य मार्ग खोजो।"* यह कठोर है – पर करुणामय है।

चौथा – विसर्जन से यदि इन तीनों से भी कोई परिवर्तन न हो – गुरु विधिवत् विसर्जित करता है – **शाप से नहीं, आशीर्वाद से।**

"क्रमशः" — सबसे महत्त्वपूर्ण पद

कोई भी क्रम छोड़कर सीधे आगे जाना – **अधर्म है।** इस एक शब्द में गुरु का **धैर्य और करुणा** दोनों समाहित हैं।

English : A teacher should never abandon an unworthy disciple abruptly. Rather, the abandonment (if necessary) must be carried out gradually through four stages:

1. Through Words (Verbal Instruction)

First, the Guru cautions the disciple clearly: *"Dear child, your study has become weak, and your dedication is declining."* If the disciple understands and reforms, then there is no need for abandonment.

2. Through Silence

If the disciple does not understand through words, the Guru withdraws teaching and maintains silence.Silence itself becomes the message: *"Reflect—what are you doing?"*

3. Through Direct Declaration

If even silence fails to bring understanding, the Guru speaks plainly: *"You are not fit for this knowledge. Go elsewhere and seek another path."* This may seem harsh, but it is compassionate at its core.

4. Through Formal Dismissal

If there is still no transformation after these three steps, the Guru formally releases the disciple—not with anger or curse, but with blessing: *"Go, my child—your path lies elsewhere."*

Core Principle : The word “gradually” (krameṇa) is the most important here. Skipping even one step and proceeding directly to abandonment is improper and unrighteous.

Through this gradual process, the Guru’s **patience and compassion** are both fulfilled.

सूत्र २१ – सद्गुरोः अन्वेषणं पित्तलपर्वते सुवर्णान्वेषणवत्, सच्छिष्यस्य अन्वेषणं काचमन्दिरे हीरान्वेषणवत् च॥

वृत्ति : सद्गुरोः अन्वेषणं अत्यन्तं दुष्करम्। यथा पित्तलपर्वते सुवर्णस्य अन्वेषणं दुर्लभं भवति, तथैव असंख्येषु गुरुषु केवलः कश्चित् एव श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठः सद्गुरुः लभ्यते।

तथैव सच्छिष्यस्य अन्वेषणमपि न सुलभम्। यथा काचमन्दिरे हीरस्य अन्वेषणं विरलम्, तथैव बहुषु शिष्यो नाममात्रेषु सत्येषु केवलः कश्चित् श्रद्धावान्, विनीतः, अध्ययनशीलः च सच्छिष्यः भवति।

अतः गुरोः अपि शिष्ये चयनः सावधानतया कर्तव्यः, शिष्यस्य अपि गुरौ अन्वेषणं विवेकपूर्वकम्। उभयोः सम्यग्योगे एव विद्यायाḥ सिद्धिः भवति॥

हिन्दी :

सद्गुरु की खोज करना बहुत कठिन है। जैसे पीतल के पर्वत में सोना ढूँढना दुर्लभ होता है, वैसे ही अनेक गुरुओं में से सच्चा श्रोत्रिय और ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु मिलना अत्यन्त दुर्लभ है।

उसी प्रकार सच्चे शिष्य की खोज भी आसान नहीं है। जैसे काँच के महल में हीरा ढूँढना कठिन होता है, वैसे ही अनेक शिष्यों में से कोई-कोई ही ऐसा होता है जो श्रद्धावान, विनम्र और अध्ययनशील हो।

इसलिए गुरु को भी शिष्य का चयन सावधानी से करना चाहिए, और शिष्य को भी गुरु की खोज विवेकपूर्वक करनी चाहिए। दोनों के सही मिलन से ही विद्या की सिद्धि होती है।

English :

The search for a true Guru is extremely difficult. Just as finding gold in a mountain of brass is rare, similarly among many teachers, only a rare one is a true Guru—well-versed in knowledge and established in realization.

Likewise, finding a worthy disciple is not easy. Just as discovering a diamond in a palace of glass is rare, among many so-called students, only a few are truly devoted, humble, and dedicated to learning.

Therefore, a Guru must also choose a disciple carefully, and a disciple must seek a Guru with discernment. Only when both are rightly matched does true knowledge attain fulfillment.

शिष्य के लक्षण

सूत्र २२ – विवेकविरक्तिशमादिसम्पन्नो विद्यापिपासुः एव शब्दब्रह्मजिज्ञासायाम् अधिकारी॥ [3]

वृत्ति : *शब्दब्रह्मजिज्ञासायाः अधिकारः सर्वेषां न भवति। यथा सुवर्णशोधनाय अग्निः आवश्यकः, तथैव शब्दब्रह्मविद्यायाः ग्रहणाय चतुर्गुणाः आवश्यकाः।*

*प्रथमः – **विवेकः।** नित्यानित्यवस्तुविवेकः – वर्णतत्त्वं नित्यम्, उच्चारणं अनित्यम्। यः एतं भेदं न जानाति सः वर्णस्य सतहे एव तिष्ठति – मूलतत्त्वं न प्राप्नोति।*

*द्वितीयः – **विरक्तिः।** यः यशसे धनाय प्रतिष्ठायै वा विद्यामिच्छति – सः विद्यां न लभते, केवलं शब्दान् लभते। विद्या तु तस्यैव हृदयं स्पृशति यः निष्कामः।*

*तृतीयः – **शमादिषट्सम्पत्।** शमः – मनसः स्थिरता – चञ्चलेन मनसा शब्दब्रह्म न गृह्यते। दमः – इन्द्रियनिग्रहः – यः इन्द्रियैः विक्षिप्तः सः ध्वनिं न शृणोति। उपरतिः – स्वाध्यायनिष्ठा – अन्यत्र मनः न भ्रमेत्। तितिक्षा – विद्याग्रहणे कष्टं भवति – तत् सोढव्यम्। श्रद्धा – गुरुवाक्ये अविचलितः विश्वासः। समाधानम् – एकस्मिन् विषये चित्तस्य पूर्णा एकाग्रता। एतैः षड्भिः गुणैः हीनः शिष्यः विद्यापात्रं न भवति।*

*चतुर्थः – **विद्यापिपासा।** मुमुक्षुत्वस्थाने अत्र विद्यापिपासा – शब्दब्रह्मज्ञानस्य तीव्रा अखण्डा च इच्छा। न शिथिला – "कदाचित् पठिष्यामि" इति नास्ति। न व्यावसायिकी – "प्रमाणपत्रं प्राप्य गमिष्यामि" इति नास्ति। केवलं विद्यैव लक्ष्यम् – एषा एव विद्यापिपासा।*

*एतैः चतुर्भिः गुणैः युक्तः एव शब्दब्रह्मजिज्ञासायाम् अधिकारी। अन्यस्य जिज्ञासा – जिज्ञासा नास्ति – **कुतूहलमात्रम्।** कुतूहली आगच्छति, पश्यति, गच्छति – जिज्ञासुः आगच्छति, तिष्ठति, विद्यां जीवति॥*

3 *विवेकचूडामणि – शंकराचार्य (श्लोक २) विवेकिनो विरक्तस्य शमादिगुणशालिनः। मुमुक्षोरेव हि ब्रह्मजिज्ञासाधिकारिता॥*

हिन्दी : शब्दब्रह्म की जिज्ञासा का अधिकार सभी को नहीं होता।जैसे सोने को शुद्ध करने के लिए अग्नि आवश्यक होती है, वैसे ही शब्दब्रह्मविद्या को ग्रहण करने के लिए चार गुण आवश्यक हैं।

1. विवेक

नित्य और अनित्य का भेद जानना ही विवेक है।वर्णविज्ञान में वर्णतत्त्व नित्य है, जबकि उच्चारण अनित्य है। जो इस भेद को नहीं जानता, वह केवल वर्ण के सतही स्तर पर ही रह जाता है—मूल तत्त्व को प्राप्त नहीं कर पाता।

2. विरक्ति

जो व्यक्ति केवल यश, धन या प्रतिष्ठा के लिए विद्या चाहता है, वह वास्तव में विद्या नहीं पाता—केवल शब्द ही पाता है।सच्ची विद्या उसी के हृदय को स्पर्श करती है, जो निष्काम होता है।

3. शमादि षट्सम्पत्ति

- **शम** — मन की स्थिरता; चंचल मन से शब्दब्रह्म का ग्रहण नहीं होता।
- **दम** — इन्द्रियों का नियंत्रण; जो इन्द्रियों में उलझा है, वह सूक्ष्म ध्वनि को नहीं समझ सकता।
- **उपरति** — स्वाध्याय में स्थिरता; मन इधर-उधर न भटके।
- **तितिक्षा** — अध्ययन में आने वाले कष्टों को सहन करना।
- **श्रद्धा** — गुरु के वचनों में अटल विश्वास।
- **समाधान** — चित्त की पूर्ण एकाग्रता।

इन गुणों के बिना शिष्य विद्या का पात्र नहीं बनता।

4. विद्यापिपासा

यहाँ मुमुक्षुत्व के स्थान पर विद्यापिपासा है— शब्दब्रह्मज्ञान की तीव्र और अखण्ड इच्छा। यह न तो शिथिल हो—"कभी पढ़ लूँगा" जैसी, और न ही केवल औपचारिक—"प्रमाणपत्र लेकर चला जाऊँगा" जैसी।केवल विद्या ही लक्ष्य हो—यही सच्ची विद्यापिपासा है।

- इन चार गुणों से युक्त व्यक्ति ही शब्दब्रह्म की जिज्ञासा का अधिकारी है। अन्यथा उसकी जिज्ञासा सच्ची नहीं होती—वह केवल कुतूहल (जिज्ञासा मात्र) होती है।
- कुतूहली आता है, देखता है और चला जाता है; परन्तु जिज्ञासु आता है, ठहरता है और विद्या को जीवन बना लेता है।

English : Not everyone is qualified for the inquiry into Śabda-Brahman (the ultimate principle of sound).Just as fire is necessary for purifying gold, similarly, four essential qualities are required to grasp the knowledge of Śabda-Brahman.

1. Discrimination (Viveka)

The ability to distinguish between the eternal and the transient. In Varna-Vijnana, the principle of sound (varna-tattva) is eternal, while pronunciation is transient.One who does not understand this distinction remains at the superficial level and fails to realize the essence.

2. Detachment (Vairāgya)

One who seeks knowledge merely for fame, wealth, or status does not truly gain knowledge—only words. True knowledge touches the heart only of one who is free from selfish motives.

3. The Sixfold Discipline (Śamādi-ṣaṭ-sampatti)

- **Śama** — steadiness of mind; a restless mind cannot grasp Śabda-Brahman.
- **Dama** — control of the senses; one distracted by the senses cannot perceive subtle sound.
- **Uparati** — dedication to study; the mind should not wander elsewhere.
- **Titikṣā** — endurance of difficulties in learning.
- **Śraddhā** — unwavering faith in the teacher's words.
- **Samādhāna** — complete concentration of mind.

Without these qualities, a student is not fit to receive knowledge.

4. Intense Thirst for Knowledge (Vidyā-Pipāsā)

Here, instead of mere desire for liberation, it is an intense and uninterrupted longing for the knowledge of Śabda-Brahman. It should not be weak ("I will study someday"), nor merely formal ("I will obtain a certificate and leave"). Knowledge alone must be the goal—this is true thirst for learning.

- Only one endowed with these four qualities is qualified for the inquiry into Śabda-Brahman. Otherwise, what appears as inquiry is merely curiosity.
- The curious person comes, observes, and leaves; but the true seeker comes, stays, and lives the knowledge.

॥ गुरु-विहीन-अध्ययन-हानि ॥

सूत्र २३ – गुरुहीनस्य विद्या निराधारा।

हिन्दी :गुरु के बिना प्राप्त विद्या आधारहीन (अस्थिर) होती है।

English : Knowledge without a teacher is without foundation (unstable).

सूत्र २४ – स्वयंपाठेन उच्चारणदोषो वर्धते।

हिन्दी : स्वयं पढ़ने से उच्चारण का दोष बढ़ता है।

English : By self-study alone, errors in pronunciation increase.

सूत्र २५ – संशयस्य निवारको गुरुरेव न ग्रन्थः।

हिन्दी : संशय का निवारण करने वाला गुरु ही है, ग्रन्थ नहीं।

English : It is the teacher alone who removes doubt, not a text.

सूत्र २६ – गुरुविहीनः पाठकः अन्धपथिकवत् भ्रमति।

हिन्दी : गुरु के बिना पाठ करने वाला व्यक्ति अन्धे पथिक के समान भटकता है।

English : A reader without a teacher wanders like a blind traveler.

सूत्र २७ – अगुरुकस्य ज्ञानं भारवद् भवति न फलदम्।

हिन्दी : गुरु के बिना प्राप्त ज्ञान बोझ के समान होता है, फल देने वाला नहीं होता।

English : Knowledge without a teacher becomes like a burden; it does not yield fruit.

सूत्र २८ – स्वमतिमात्रेण शास्त्रार्थो विपर्यस्यते।

हिन्दी : केवल अपनी बुद्धि के आधार पर शास्त्र का अर्थ उलट (विकृत) हो जाता है।

English : By relying solely on one's own intellect, the meaning of the scripture gets distorted.

सूत्र २९ – गुरुहीनस्य श्रुतिः कलुषिता भवति।

हिन्दी अनुवादः गुरु के बिना सुनी हुई विद्या अशुद्ध (दूषित) हो जाती है।

English : Without a teacher, received (heard) knowledge becomes impure (distorted).

सूत्र ३० – अगुरुकः शब्दं जानाति न तु शब्दशक्तिम्।

हिन्दी : गुरु के बिना व्यक्ति शब्द को तो जानता है, पर उसकी शक्ति (गूढ़ अर्थ) को नहीं।

English : A person without a teacher knows the word, but not its power (deeper meaning).

सूत्र ३१ – गुरुविहीनस्य कण्ठस्थमपि निष्फलम्।

हिन्दी : गुरु के बिना कण्ठस्थ (याद किया हुआ) ज्ञान भी निष्फल हो जाता है।

English : Even memorized knowledge becomes fruitless without a teacher.

सूत्र ३२ – स्वाध्यायमात्रेण परम्परा न लभ्यते।

हिन्दी : केवल स्वाध्याय से परम्परा प्राप्त नहीं होती।

English : Tradition cannot be attained through self-study alone.

सूत्र ३३ – गुरुविहीनो विद्यार्थी बीजं विना क्षेत्रवत्।

हिन्दी : गुरु के बिना विद्यार्थी बीज के बिना खेत के समान होता है।

English : A student without a teacher is like a field without seeds.

।। इति प्रथमः पादः ।।

द्वितीयः पादः (*उच्चारण*)

॥ *उच्चारण* ॥

सूत्र १ – माधुर्यमक्षरव्यक्तिः पदच्छेदस्तु सुस्वरः। धैर्यं लयसमर्थं च षडेते पाठका गुणाः॥[4]

वृत्ति : अस्मिन् सूत्रे पाठकस्य षट् गुणाः निर्दिष्टाः। पाठः नाम केवलं शब्दोच्चारणं न भवति – यदा वर्णस्य आत्मा श्रोतुः कर्णपर्यन्तं सम्यक् प्राप्नोति, तदा एव पाठः सफलः भवति।

माधुर्यम् – उच्चारणे स्वाभाविकं सौम्यत्वम्। एतत् बहिः न आगच्छति, अपि तु यदा वर्णः स्वस्थानात् यथायोग्यप्रयत्नेन निष्पद्यते, तदा माधुर्यं स्वयमेव जायते। यथा – "क" इति वर्णः कण्ठात् एव उच्चार्यः, न तु अन्यस्मात् स्थानात्।

अक्षरव्यक्तिः – प्रत्येकस्य अक्षरस्य स्पष्टं पृथक् च श्रवणम्। संयुक्ताक्षरेष्वपि प्रत्येकः वर्णः स्वस्वरूपेण व्यक्तः भवेत्। यथा – "अग्निः" इति पदे अ, ग्, न्, इ, ः इति सर्वे वर्णाः पृथक् श्रूयन्ते। अयं गुणः वर्णविज्ञानदृष्ट्या अतीव महत्त्वपूर्णः।

पदच्छेदः – पदानां यथोचितं विभाजनम्। यत्र एकं पदं समाप्तं भवति, अन्यत् च आरभ्यते, तत्र यथायोग्यः विरामः भवेत्। यथा – "इत्यग्निः" इति "इति + अग्निः" इति ज्ञात्वा पठनीयम्।

सुस्वरः – उदात्तानुदात्तस्वरितानां यथास्थानप्रयोगः। वेदपाठे स्वरपरिवर्तनात् अर्थपरिवर्तनं भवति, अतः अयं गुणः अत्यावश्यकः।

धैर्यम् – पाठे स्थिरता तथा श्वासनियन्त्रणम्। यः पाठकः धैर्यवान्, सः प्रत्येकं वर्णं सम्यक् श्वासेन उच्चारयति, तथा च अनायासेन प्राणायामफलम् अपि प्राप्नोति।

लयसमर्थता – पाठगत्याः समत्वम्। ह्रस्वस्य अर्धमात्रा, दीर्घस्य पूर्णमात्रा, प्लुतस्य त्रिमात्रा – एतेषां यथानियमपालनं लयसमर्थता उच्यते॥

हिन्दी : *इस सूत्र में पाठक के छः गुण बताए गए हैं। पाठ का अर्थ केवल शब्द बोलना नहीं है – जब वर्ण की आत्मा श्रोता के कान तक पहुँचे, तभी पाठ सफल होता है।*

माधुर्य – उच्चारण में स्वाभाविक मधुरता। यह बाहर से नहीं लाई जाती – जब वर्ण अपने उचित स्थान से सहज प्रयत्न द्वारा निकलता है, तो माधुर्य अपने आप उत्पन्न होता है। जैसे – 'क' को कण्ठ से निकालें, अन्य स्थान से नहीं।

---

4 वर्णोच्चारण शिक्षा" के 16वें सूत्र

अक्षर-व्यक्ति – प्रत्येक अक्षर स्पष्ट और पृथक् सुनाई दे। संयुक्ताक्षरों में भी प्रत्येक वर्ण अपने रूप में प्रकट हो। जैसे – 'अग्निः' में पाँचों वर्ण – अ, ग्, न्, इ, ः – अलग-अलग सुनाई दें। यह गुण वर्ण-विज्ञान की दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है।

पदच्छेद – पदों का उचित विभाजन। जहाँ एक पद समाप्त हो और दूसरा प्रारम्भ हो – वहाँ उचित विराम हो। जैसे – 'इत्यग्निः' को 'इति + अग्निः' जानकर पढ़ें।

सुस्वर – उदात्त, अनुदात्त, स्वरित – तीनों स्वरों का यथास्थान प्रयोग। वेद-पाठ में स्वर का परिवर्तन अर्थ का परिवर्तन करता है – इसलिए यह गुण अत्यन्त आवश्यक है।

धैर्य – पाठ में स्थिरता और श्वास-नियन्त्रण। जो पाठक धैर्यवान् है, वह प्रत्येक वर्ण को पूरा श्वास देता है – और अनजाने में प्राणायाम का फल भी पाता है।

लयसमर्थ – पाठ की गति में समभाव। ह्रस्व के लिए आधी मात्रा, दीर्घ के लिए पूरी मात्रा, और प्लुत के लिए तीन मात्रा – इनका पालन ही लयसमर्थ गुण है।

English

This sutra enumerates six essential qualities of a proficient reciter. Recitation is not mere vocalisation — it succeeds only when the essence of each *varna* reaches the listener's consciousness intact.

Mādhurya (Sweetness) — A natural mellowness in pronunciation. This quality is not externally cultivated; it arises spontaneously when each phoneme is articulated from its correct place of articulation (*sthāna*) with natural effort (*prayatna*). For instance, the velar *'ka'* must emerge from the throat, not from any other place.

Akṣara-vyakti (Phonemic Clarity) — Each syllable must be distinctly and separately audible. Even within conjunct consonants, every constituent phoneme must retain its individual identity. For example, in *'agniḥ'*, all five units — a, g, n, i, ḥ — must be perceptible separately. From the perspective of *Varṇa-Vijñāna*, this is the most critical quality.

Padaccheda (Word Demarcation) — Correct separation of words at junctures. At sandhi points, the boundary between words must be clearly perceived, though phonetically merged. For example, *'ityagniḥ'* must be understood and delivered as *'iti + agniḥ'*.

Susvara (Correct Accentuation) — Proper use of the three Vedic accents — *udātta* (high), *anudātta* (low), and *svarita* (falling). In Vedic recitation, an error in accent can alter meaning entirely, making this quality indispensable.

Dhairya (Steadiness) — Stability of pace and breath control. A steady reciter naturally grants each phoneme its full duration of breath — and in doing so, unknowingly practises *prāṇāyāma*.

Layasamartha (Rhythmic Balance) — Equanimity of tempo. Short (*hrasva*) syllables receive half a mātrā, long (*dīrgha*) syllables one full mātrā, and protracted (*pluta*) syllables three mātrās — adherence to these proportions constitutes *layasamartha*.

॥उच्चारण-दोष ॥

सूत्रम् २ – ग्रस्तं निरस्तमविलम्बितं निहतमम्बकृतं धनातमथो विकम्पितम्। सन्दष्टमेणीकृतमर्धकं दूतं विकीर्णमेताः स्वरदोषभावनाः॥[5]

वृत्ति : सूत्रेऽस्मिन् पाठकस्य द्वादश स्वरदोषाः निरूपिताः। एते दोषाः श्वासकण्ठमुखमनसाम् अशुद्धप्रयोगात् जायन्ते।

ग्रस्तः – स्वरस्य मुखे निग्रहपूर्वकं उच्चारणम्। अत्यधिकसंकोचात् स्वरः न निर्गच्छति, श्रोतुः कर्णं न प्राप्नोति।

निरस्तः – स्वरस्य बहिः क्षेपणवत् उच्चारणम्। अयं ग्रस्तस्य विपरीतः दोषः; अस्मिन् स्वरस्य गाम्भीर्यं नश्यति।

अविलम्बितः – अतीव शीघ्रं, धक्कापूर्वकं च उच्चारणम्। अत्र मात्राकालः नश्यति।

निहतः – जलपूर्णमुखवत् उच्चारणम्। जिह्वाया अनुचितस्थानन्यासात् मुखगुहायाम् अवरोधः जायते।

अम्बकृतः – अतीव नासिकया उच्चारणम्, गोर्वत् रम्भानादसदृशम्। अनुनासिकता अत्र अतिक्रान्ता भवति।

धनातः – प्रहारपूर्वकं वेगेन च उच्चारणम्। अल्पप्राणमहाप्राणयोः भेदः अत्र नश्यति।

विकम्पितः – कम्पमानस्वरेण उच्चारणम्। श्वासनलिकायाः अस्थैर्यात् एष दोषः जायते।

सन्दष्टः – दन्तैः सन्दष्टवत् उच्चारणम्। जबडस्य अतीव संकोचात् एष दोषः भवति।

एणीकृतः – स्वरस्य अनियमितोन्नतिनिम्नता, मृग्या इव चलनम्। दात्तानुदात्तयोः विपर्ययः अत्र दृश्यते।

अर्धकः – दीर्घवर्णस्य अर्धमात्रया उच्चारणम्। अनेन ह्रस्वदीर्घयोः भेदः नश्यति, अयं महद् दोषः।

दूतः – अतीव शीघ्रं, धावमानवत् उच्चारणम्। विरामाभावः अत्र दृश्यते; अविलम्बितात् अपि तीव्रतरः।

विकीर्णः – स्वरस्य सर्वतो विक्षेपः। न लयः, न व्यक्तिः, न माधुर्यम् – सर्वे गुणाः अत्र नश्यन्ति।

---

5 महाभाष्य अ 1 पाद 1 सूत्र 1

<u>दोषानां वर्गीकरणम्</u>

एते द्वादश दोषाः त्रिधा विभज्यन्ते –

(१) श्वासजन्याः – ग्रस्तः, निरस्तः, धनातः, विकम्पितः।

(२) स्थानजन्याः – निहतः, अम्बकृतः, सन्दष्टः, एणीकृतः।

(३) कालजन्याः – अविलम्बितः, अर्धकः, दूतः, विकीर्णः॥

हिन्दी :

सूत्र १ में जहाँ पाठक के साधनीय गुण बताए गए, वहीं इस सूत्र में बारह त्याज्य स्वर-दोष कहे गए हैं। ये दोष श्वास, कण्ठ, मुख और मन – चारों के अशुद्ध प्रयोग से उत्पन्न होते हैं।

ग्रस्त – स्वर को मुँह में पकड़कर बोलना। उच्चारण-स्थान पर अत्यधिक संकोच से स्वर दब जाता है। जैसे – 'अ' को कण्ठ में दबाकर बोलने वाले पाठक का वर्ण श्रोता के कान तक पहुँचता ही नहीं।

निरस्त – स्वर को बाहर फेंककर बोलना। यह ग्रस्त का ठीक विपरीत दोष है। जैसे – जो पाठक 'अ' को वायु के साथ बाहर फेंकता है, उसके स्वर में गाम्भीर्य नहीं रहता।

अविलम्बित – धक्का देकर, अत्यन्त शीघ्र बोलना। मात्रा-काल नष्ट हो जाता है। जैसे – दस मात्रा के पद को पाँच मात्रा में पढ़ने वाले पाठक के उच्चारण में न माधुर्य रहता है, न अक्षर-व्यक्ति।

निहत – मुँह में जल भरकर जैसा बोलना। जिह्वा के अनुचित स्थान के कारण मुख-गुहा में अवरोध उत्पन्न होता है। जैसे – 'न' पढ़ते समय जो जिह्वा को तालु पर रखता है, उसके वर्ण में निहत-दोष आता है।

अम्बकृत – गाय की रँभाहट जैसा, नासिका से बोलना। अनुनासिकता की अधिकता। जैसे – 'क' जैसे अनुनासिकेतर वर्ण को भी जो नासिका से उच्चारित करता है, उसके पाठ में यह दोष होता है।

धनात – प्रहार करते हुए, वेग से बोलना। श्वास का अचानक तीव्र प्रवाह। जैसे – अल्पप्राण वर्ण को भी प्रहार के साथ बोलने वाला पाठक महाप्राण और अल्पप्राण का भेद नष्ट कर देता है।

विकम्पित – काँपते स्वर से बोलना। श्वास-नली में अस्थिरता। जैसे – वृद्ध या थका हुआ पाठक जब भय या श्रम से काँपते स्वर में पढ़ता है – वहाँ यह दोष होता है।

सन्दष्ट – दाँतों से काटते हुए बोलना। जबड़ा अत्यन्त बन्द रहता है। जैसे – 'त', 'थ', 'स' जैसे दन्त्य वर्ण पढ़ते समय जो दाँतों को परस्पर भिंचता है, उसके पाठ में सन्दष्ट-दोष होता है।

एणीकृत – हिरनी की भाँति स्वर का ऊपर-नीचे अनियमित रूप से जाना। जैसे – उदात्त के स्थान पर अनुदात्त या अनुदात्त के स्थान पर उदात्त बोलने वाले पाठक में यह दोष होता है।

अर्धक – दीर्घ वर्ण को आधे काल में बोलना। जैसे – 'आ' को 'अ' की तरह आधे समय में पढ़ना – यह अर्धक-दोष है। वर्ण-विज्ञान की दृष्टि से यह दोष सर्वाधिक गम्भीर है, क्योंकि इससे ह्रस्व-दीर्घ का भेद ही नष्ट हो जाता है।

दूत – दूत की भाँति अत्यन्त शीघ्र भागते हुए बोलना। यह अविलम्बित से भी तीव्र दोष है। जैसे – जो पाठक एक ही श्वास में अनेक पद पढ़ जाता है और विराम नहीं देता – वह दूत-दोषी है।

विकीर्ण – स्वर चारों दिशाओं में बिखर जाता है – न लय, न व्यक्ति, न माधुर्य। जैसे – जो पाठक थककर या अनवधान से पढ़ता है, उसके सभी वर्ण आकाश में विकीर्ण हो जाते हैं। यह दोष वस्तुतः अन्य सभी दोषों के सम्मिलित प्रभाव जैसा है।

ये बारह दोष मूलतः तीन प्रकार के हैं –

- श्वास से उत्पन्न (ग्रस्त, निरस्त, धनात, विकम्पित),
- उच्चारण-स्थान से उत्पन्न (निहत, अम्बकृत, सन्दष्ट, एणीकृत),
- काल से उत्पन्न (अविलम्बित, अर्धक, दूत, विकीर्ण)।

English :

Whereas Sūtra 1 described the qualities to be cultivated, this sūtra enumerates twelve phonetic defects (*svara-doṣas*) to be abandoned. These defects arise from the improper use of breath, throat, oral cavity, and mind.

Grasta (Suppressed) — Articulating with the sound held back, as if gripped in the mouth. Excessive constriction at the place of articulation prevents the phoneme from reaching the listener. For example, a reciter who suppresses *'a'* deep in the throat produces a phoneme that never truly emerges.

Nirasta (Ejected) — The opposite of *grasta* — hurling the sound outward. The voice lacks depth and gravity. For example, a reciter who expels *'a'* forcefully with air produces a tone devoid of resonance.

Avilambitam (Rushed) — Speaking with an abrupt push, extremely rapidly, destroying *mātrā*-timing. For example, a reciter who compresses a ten-mātrā phrase into five loses both phonemic clarity and melodic quality simultaneously.

Nihatam (Muffled) — Speaking as if the mouth were filled with water. Incorrect tongue placement creates obstruction within the oral cavity. For example, placing the tongue at the palate while reciting the dental *'na'* produces this defect.

Ambakṛtam (Bovine) — Speaking through the nose, resembling the lowing of a cow. Excessive nasalisation. For example, nasalising non-nasal consonants such as *'ka'* introduces this defect.

Dhanātam (Struck) — Speaking with sudden, forceful breath — as if striking. This effaces the distinction between aspirated (*mahāprāṇa*) and unaspirated (*alpaprāṇa*) consonants. For example, delivering *'ka'* with the force appropriate only to *'kha'*.

Vikampitam (Tremulous) — Speaking with a quavering, trembling voice due to instability of the trachea — arising from fatigue or fear. The sound wave itself becomes irregular, disturbing phonemic identity.

Sandaṣṭam (Bitten) — Speaking with excessively clenched jaws, as if biting the sound. Particularly affects dental consonants — *ta, tha, sa* — by introducing unintended friction at the dental place of articulation.

Eṇīkṛtam (Leaping) — The voice leaps irregularly up and down, like a doe (*eṇī*). Specifically, Vedic accents — *udātta* and *anudātta* — are applied at wrong positions, disturbing both meaning and musicality.

Ardhakam (Halved) — Articulating a long (*dīrgha*) phoneme in the duration of a short (*hrasva*) one. For example, pronouncing *'ā'* with the duration of *'a'*. From the standpoint of *Varṇa-Vijñāna*, this is the gravest defect, as it obliterates the fundamental distinction of phoneme length.

Dūtam (Hasty) — Speaking as a messenger runs — even faster than *avilambitam*. A reciter who reads multiple words in a single breath, allowing no pause, commits this defect. The entire temporal structure of recitation collapses.

Vikīrṇam (Scattered) — The voice scatters in all directions — no rhythm, no phonemic clarity, no sweetness. This defect is, in essence, the cumulative result of all the preceding eleven defects. A reciter who reads in fatigue or inattention typically exhibits this.

These twelve defects are fundamentally of three kinds —

- breath-born (*śvāsa-janita*): grasta, nirasta, dhanāta, vikampita; place-born
- (*sthāna-janita*): nihata, ambakṛta, sandaṣṭa, eṇīkṛta; and time-born
- (*kāla-janita*): avilambitam, ardhakam, dūtam, vikīrṇam.

॥ स्वर-दोषाः ॥

सूत्र ३ – स्वरदोषा उच्चारणे अर्थभ्रंशकारिणः॥

हिन्दी : स्वरों (उदात्त, अनुदात्त, स्वरित) के गलत प्रयोग से अर्थ में भ्रम या परिवर्तन हो जाता है–इसे ही स्वर-दोष कहते हैं।

वृत्ति :वर्णोच्चारणे स्वरशुद्धता अनिवार्या। स्वरदोषेण वेदपाठस्य अर्थः छन्दश्च विनश्यति। षट् स्वरदोषाः एवं ज्ञातव्याः –

स्वरभ्रंशः – यत्र उदात्तः अपेक्षितः तत्र अनुदात्तः स्वरितो वा उच्यते। अर्थः विपर्यस्यते।

स्वरहीनता – उदात्तानुदात्तस्वरितभेदस्य सर्वथा अभावः। पाठः सामान्यो भवति, वेदस्वरूपं नश्यति।

स्वरातिरिक्तता – यत्र स्वरः न देयः तत्रापि आरोहः। कृत्रिमता विकृतिश्च जायते।

स्वरविपर्ययः – स्वरस्य स्थानपरिवर्तनम् – अन्यस्मिन् अक्षरे स्वरारोपणम्। अर्थश्च छन्दश्च उभौ विनश्यतः।

स्वरमिश्रणम् – उदात्तानुदात्तस्वरितानाम् अस्पष्टं मिश्रितं च उच्चारणम्। स्पष्टता नश्यति।

अस्वाभाविकस्वरः – प्राकृतस्थाने कृत्रिमः नाटकीयो वा स्वरः। शास्त्रीयता सर्वथा नश्यति।

हिन्दी : *मुख्य स्वर-दोषः*

१. स्वरभ्रंशः

जहाँ उदात्त होना चाहिए वहाँ अनुदात्त या स्वरित बोल देना। *परिणामः* अर्थ बदल सकता है (विशेषतः वेद में)

२. स्वरहीनता

उदात्त, अनुदात्त, स्वरित का भेद ही न करना। *परिणामः* पाठ सामान्य हो जाता है, वेद-पाठ का स्वरूप नष्ट होता है।

३. स्वरातिरिक्तता

जहाँ स्वर नहीं देना चाहिए, वहाँ भी जोर या चढ़ाव देना। *परिणामः* कृत्रिमता और विकृति उत्पन्न होती है।

४. स्वरविपर्ययः

स्वर का स्थान बदल देना (गलत अक्षर पर लगाना)। परिणामः अर्थ और छन्द दोनों बिगड़ते हैं।

५. स्वरमिश्रणम्

उदात्त, अनुदात्त, स्वरित को मिलाकर अस्पष्ट बोलना। परिणामः स्पष्टता नष्ट होती है।

६. अस्वाभाविकस्वरः

प्राकृतिक स्वर के स्थान पर कृत्रिम या नाटकीय स्वर देना। परिणामः शास्त्रीयता समाप्त हो जाती है।

English : Errors in intonation (accent) that distort meaning are called svara-doṣa (intonation faults).

Main Types:

1. **Accent Error** – Wrong pitch placement
2. **Loss of Accent** – Ignoring accent distinctions
3. **Over-accentuation** – Unnecessary emphasis
4. **Misplacement** – Accent on wrong syllable
5. **Mixing of Accents** – Lack of clarity
6. **Artificial Tone** – Forced or unnatural sound

सूत्र ४ – ह्रस्वदीर्घप्लुतविपर्ययो नासिक्याभावातिरिक्तते मात्राभावसंकरौ च – पञ्च मात्रादोषाः॥

वृत्ति :वर्णोच्चारणे मात्राशुद्धता अनिवार्या। मात्रादोषेण शब्दस्य अर्थः छन्दश्च विनश्यति। पञ्च मात्रादोषाः एवं ज्ञातव्याः –

प्रथमः – **ह्रस्वदीर्घप्लुतविपर्ययः।** ह्रस्वस्थाने दीर्घः, दीर्घस्थाने ह्रस्वः, प्लुतस्थाने ह्रस्वो दीर्घो वा – इति त्रयाणां परस्परं विनिमयः विपर्ययः। यथा – "राम" स्थाने "रम", "कृष्ण" स्थाने "कृषण"। अर्थः छन्दश्च उभौ विनश्यतः।

द्वितीयः – **नासिक्याभावः।** यत्र अनुनासिकः अपेक्षितः तत्र तस्य सर्वथा अभावः। यथा – "अंश" स्थाने "अश", "संस्कृत" स्थाने "सस्कृत"। नासिक्याभावेन शब्दः अपूर्णः भवति।

तृतीयः – **नासिक्यातिरिक्तता।** यत्र अनुनासिकः न देयः तत्रापि तस्य आरोपणम्। यथा – "राम" स्थाने "राँम"। अतिरिक्तता अपि दोषः – न्यूनतावत्।

चतुर्थः – **मात्राभावः।** मात्रायाः सर्वथा लोपः – शून्यता। यत्र मात्रा अनिवार्या तत्र तस्याः पूर्णः अभावः। यथा – "भानु" स्थाने "भनु" — मात्रा एव नास्ति। अयं दोषः असावधानीजन्यः।

हिन्दीभाषाप्रभावेण संस्कृतपाठे अन्त्यस्वरस्य लोपः सर्वाधिकः दृश्यते। "राम" इति पदे अन्तिमः "अ" स्वरः अनिवार्यः – तस्य लोपे "राम्" इति हलन्तरूपं जायते। एतत् संस्कृतस्य मूलस्वरूपस्य विनाशकम्।

पञ्चमः – **मात्रासंकरः।** द्वयोः मात्रयोः अनुचितं मिश्रणम् – न पूर्णा ह्रस्वा, न पूर्णा दीर्घा – उभयोः मध्ये लम्बमाना मात्रा। यथा – "राम" — न पूर्णं ह्रस्वम्, न पूर्णं दीर्घम्। अयं दोषः आङ्ग्लभाषाप्रभावेण अधुना सर्वाधिकः दृश्यते।

हिन्दी : वर्णों के उच्चारण में मात्रा की शुद्धता अत्यन्त आवश्यक है। मात्रा में दोष होने से शब्द का अर्थ और छन्द–दोनों नष्ट हो जाते हैं। मात्रा के पाँच दोष इस प्रकार जानने चाहिए–

१. ह्रस्व-दीर्घ-प्लुत विपर्यय

जहाँ ह्रस्व के स्थान पर दीर्घ, दीर्घ के स्थान पर ह्रस्व, या प्लुत के स्थान पर ह्रस्व अथवा दीर्घ बोला जाए–उसे विपर्यय कहते हैं।

जैसे– "राम" के स्थान पर "रम", "कृष्ण" के स्थान पर "कृषण"।इससे अर्थ और छन्द दोनों बिगड़ जाते हैं।

२. नासिक्य का अभाव

जहाँ अनुनासिक (ँ/ं) आवश्यक हो, वहाँ उसका पूर्ण अभाव होना।
जैसे– "अंश" के स्थान पर "अश", "संस्कृत" के स्थान पर "सस्कृत"। इससे शब्द अपूर्ण हो जाता है।

३. नासिक्य की अतिरिक्तता

जहाँ अनुनासिक आवश्यक नहीं है, वहाँ उसका प्रयोग करना।
जैसे– "राम" के स्थान पर "राँम"। अधिकता भी उतनी ही दोषपूर्ण है जितनी कमी।

४. मात्रा का अभाव

जहाँ मात्रा आवश्यक है, वहाँ उसका लोप हो जाना।
जैसे– "भानु" के स्थान पर "भनु"। यह दोष प्रायः असावधानी के कारण होता है।

विशेष ध्यान: हिन्दी भाषा के प्रभाव से संस्कृत पाठ में अन्तिम स्वर (अ) का लोप बहुत अधिक देखा जाता है। "राम" में अन्त का "अ" अनिवार्य है–उसके लोप से "राम्" बन जाता है, जो संस्कृत के शुद्ध रूप के विरुद्ध है।

५. मात्रा-संकर

दो मात्राओं का अनुचित मिश्रण–न पूर्ण ह्रस्व, न पूर्ण दीर्घ।
जैसे– "राम" को न पूरी तरह छोटा, न पूरी तरह लम्बा बोलना। यह दोष विशेषतः अंग्रेज़ी के प्रभाव से आजकल अधिक देखा जाता है।

English (Clear & Scholarly)

Correct **vowel duration (mātrā)** is essential in pronunciation. Errors in mātrā distort both the **meaning (artha)** and the **meter (chandas)** of a word. Five types of mātrā defects are to be understood:

1. Confusion of Short, Long, and Prolonged (Hrasva–Dīrgha–Pluta Reversal)

When a short vowel is pronounced as long, a long as short, or a prolonged vowel is replaced incorrectly — this is called reversal.

Example: “Rāma” pronounced as “Rama”, “Kṛṣṇa” as “Kṛṣaṇa”. This distorts both meaning and meter.

2. Absence of Nasalization

When a nasal sound (anusvāra/anunāsika) is required but omitted. Example: “Aṁśa” pronounced as “Aśa”, “Saṁskṛta” as “Saskṛta”. This makes the word incomplete.

3. Excessive Nasalization

When nasalization is added where it is not required.
Example: “Rāma” pronounced as “Rãma”. Excess is as faulty as deficiency.

4. Loss of Vowel Duration (Mātrā Absence)

When a required vowel length is completely omitted.
Example: “Bhānu” pronounced as “Bhanu”. This error is generally due to carelessness.

Special Note:

Under the influence of modern Hindi, the final vowel “a” is often dropped in Sanskrit recitation. In “Rāma”, the final “a” is essential; its omission results in “Rām”, which is incorrect in classical Sanskrit pronunciation.

5. Mixed or Unclear Vowel Duration (Mātrā Saṅkara)

Improper blending of short and long vowels—neither fully short nor fully long. Example: Pronouncing “Rāma” with an unclear, in-between duration. This defect is commonly seen today due to the influence of English pronunciation patterns.

Summary Line: *Correct mātrā ensures clarity of sound, meaning, and meter; its distortion leads to linguistic and metrical errors.*

॥ *व्यञ्जनदोष* ॥

सूत्र ५ – अनुनासिकसंयुक्तलोपविसर्गानुस्वारातिरिक्तव्यञ्जनप्राणोष्मातिरिक्तस्वराः अष्ट व्यञ्जनविशेषदोषाः॥

वृत्ति : *व्यञ्जनोच्चारणे अष्ट विशेषदोषाः ज्ञातव्याः। एते दोषाः स्थानकरणप्रयत्नदोषेभ्यः भिन्नाः – व्यञ्जनस्य विशेषस्वभावात् उत्पन्नाः।*

*प्रथमः – **अनुनासिकदोषः।** ङ, ञ, ण, न, म – एते पञ्चमाक्षराः नासिकया उच्चार्यन्ते। तेषां स्थाने अन्यव्यञ्जनोच्चारणम् अनुनासिकदोषः। यथा – ञ स्थाने न, ण स्थाने न बोलना।*

*द्वितीयः – **संयुक्तदोषः।** द्वयोः त्रयाणां वा व्यञ्जनानां संयोगे अशुद्धिः। यथा – क्ष स्थाने छ बोलना, त्र स्थाने च बोलना। संयुक्तव्यञ्जनं पृथक्-पृथक् शुद्धं बोलना आवश्यकम्।*

*तृतीयः – **लोपदोषः।** व्यञ्जनस्य सर्वथा लोपः। यथा – संस्कृत स्थाने ससकृत – स् का लोप। लोपेन शब्दः अपूर्णः अर्थहीनश्च भवति।*

*चतुर्थः – **विसर्गानुस्वारदोषः।** विसर्गस्य – रामः स्थाने रामा। अनुस्वारस्य – रामं स्थाने राम। एतयोः लोपः आरोपणं वा दोषः।*

*पञ्चमः – **अतिरिक्तव्यञ्जनः।** यत्र व्यञ्जनं न देयं तत्र आरोपणम्। यथा – अन्त्यव्यञ्जनस्य द्विरुच्चारणम्।*

*षष्ठः – **प्राणदोषः।** अल्पप्राणस्थाने महाप्राणः, महाप्राणस्थाने अल्पप्राणः। यथा – क स्थाने ख, ख स्थाने क बोलना। प्राणभेदेन अर्थभेदः जायते।*

*सप्तमः – **ऊष्मदोषः।** स, श, ष – त्रयाणाम् उच्चारणे परस्परं मिश्रणम्। स – दन्त्यः, श – तालव्यः, ष – मूर्धन्यः। एतेषां भेदः न कृतः चेत् ऊष्मदोषः। अयं दोषः अद्यतने काले सर्वाधिकः।*

*अष्टमः – **अतिरिक्तस्वरः।** व्यञ्जनसमूहं विभक्तुं मध्ये अनावश्यकः स्वरः। यथा – स्कूल स्थाने इस्कूल, ब्रह्म स्थाने बिरह्म। अयं दोषः आङ्ग्लभाषाप्रभावेण जायते।*

एते अष्ट दोषाः व्यञ्जनशुद्धेः विरोधिनः। एतेषां परिहारः गुरुमुखश्रवणेन अभ्यासेन च एव सम्भवति॥

हिन्दी

व्यञ्जन के उच्चारण में आठ विशेष दोष होते हैं। ये स्थान-करण-प्रयत्न के सामान्य दोषों से भिन्न हैं – व्यञ्जन के विशेष स्वभाव से उत्पन्न होते हैं।

१. अनुनासिकदोषः ङ, ञ, ण, न, म – ये पाँचों नासिका से बोले जाते हैं। इनके स्थान पर अन्य व्यञ्जन बोलना अनुनासिकदोष है। **उदाहरण** – ञ को न बोलना, ण को न बोलना। **परिणाम** – शब्द का स्वरूप बदल जाता है।

२. संयुक्तदोषः दो या तीन व्यञ्जनों के संयोग में अशुद्धि। **उदाहरण** – क्ष को छ बोलना, त्र को च बोलना। **परिणाम** – संयुक्त व्यञ्जन की पहचान नष्ट होती है।

३. लोपदोषः व्यञ्जन का सर्वथा लोप। **उदाहरण** – संस्कृत को ससकृत बोलना – स् का लोप। **परिणाम** – शब्द अपूर्ण और अर्थहीन हो जाता है।

४. विसर्गानुस्वारदोषः विसर्ग और अनुस्वार का अशुद्ध उच्चारण। **उदाहरण** – रामः को रामा बोलना, रामं को राम बोलना। **परिणाम** – वाक्य का व्याकरण और अर्थ दोनों बिगड़ते हैं।

५. अतिरिक्तव्यञ्जनः जहाँ व्यञ्जन नहीं देना चाहिए वहाँ देना। **उदाहरण** – अन्त्य व्यञ्जन का द्विरुच्चारण। **परिणाम** – कृत्रिमता और विकृति उत्पन्न होती है।

६. प्राणदोषः अल्पप्राण के स्थान पर महाप्राण या महाप्राण के स्थान पर अल्पप्राण बोलना। **उदाहरण** – क के स्थान पर ख, ख के स्थान पर क। **परिणाम** – अर्थभेद हो जाता है।

७. ऊष्मदोषः स, श, ष – तीनों का परस्पर मिश्रण। **स** – दन्त्य, **श** – तालव्य, **ष** – मूर्धन्य। **उदाहरण** – षट् को सट बोलना, शिव को सिव बोलना। **परिणाम** – यह दोष आज के काल में सर्वाधिक देखा जाता है।

८. अतिरिक्तस्वरः व्यञ्जन-समूह को तोड़ने के लिए बीच में अनावश्यक स्वर जोड़ना। **उदाहरण** – स्कूल को इस्कूल, ब्रह्म को बिरह्म बोलना। **परिणाम** – यह दोष अंग्रेजी भाषा के प्रभाव से उत्पन्न होता है।

उपसंहार

> *ये आठों दोष व्यञ्जन-शुद्धि के शत्रु हैं। इनका परिहार केवल गुरुमुख से श्रवण और निरन्तर अभ्यास से ही सम्भव है – न केवल ग्रन्थ-पाठ से।*

English :

In the pronunciation of consonants, **eight specific defects** are to be understood. These defects are distinct from those related to place, organ, and effort, as they arise from the particular nature of consonants.

1. Nasalization Error (Anunāsika Doṣa)

The five nasal consonants—ṅ, ñ, ṇ, n, m—are pronounced through the nose. Replacing them with other consonants constitutes this error.
Example: Pronouncing ñ or ṇ as n.

2. Conjunct Consonant Error (Saṁyukta Doṣa)

Impurity in the pronunciation of combined consonants (clusters of two or more consonants).
Example: Pronouncing “kṣa” as “cha”, or “tra” as “cha”.Each consonant in a cluster must be clearly articulated.

3. Omission Error (Lopa Doṣa)

Complete omission of a consonant.

Example: “Saṁskṛta” pronounced as “Saskṛta” (loss of ‘ṁ’).This makes the word incomplete and meaningless.

4. Visarga and Anusvāra Error

Incorrect omission or addition of visarga (ḥ) or anusvāra (ṁ).

Example: “Rāmaḥ” pronounced as “Rāma”, or “Rāmaṁ” as “Rāma”.Both omission and incorrect insertion are faults.

5. Addition of Extra Consonant

Inserting a consonant where it is not required.
Example: Doubling a final consonant unnecessarily.

6. Aspiration Error (Prāṇa Doṣa)

Confusion between unaspirated and aspirated sounds

Example: Pronouncing “ka” as “kha”, or “kha” as “ka”.Differences in aspiration can change meaning.

7. Sibilant Error (Ūṣma Doṣa)

Mixing of s, ś, and ṣ sounds.

- s (dental)
- ś (palatal)
- ṣ (retroflex)
  Failure to distinguish them leads to this defect, which is very common today.

8. Insertion of Extra Vowel

Adding an unnecessary vowel within consonant clusters.

Example: “school” pronounced as “iskool”, “brahma” as “birahma”. This error arises due to the influence of English pronunciation.

Conclusion

These eight defects obstruct the purity of consonant pronunciation. Their correction is possible only through **listening to the Guru and consistent practice**.

सूत्र ६ – स्थानकरणप्रयत्नदोषाः सर्ववर्णेषु ॥

वृत्ति : *वर्णो*च्चारणे त्रयः मूलाधाराः सन्ति – स्थानं, करणं, प्रयत्नश्च। एते त्रयः स्वरे व्यञ्जने च – सर्वत्र विद्यमानाः। अतः एतेषां दोषाः अपि सर्ववर्णसाधारणाः।

प्रथमः – **स्थानदोषः।** उच्चारणस्थानं – कण्ठः, तालुः, मूर्धा, दन्तः, ओष्ठः। यत्र यस्य वर्णस्य स्थानं

निर्दिष्टं – तत्र न उच्चार्यते चेत् स्थानदोषः। यथा – कण्ठ्यस्य क स्थाने तालव्यः च उच्चार्यते। दन्त्यस्य त स्थाने मूर्धन्यः ट उच्चार्यते। स्थानदोषः स्वरे व्यञ्जने च समानरूपेण भवति।

द्वितीयः – **करणदोषः।** करणम् – उच्चारणे प्रयुक्तः अवयवः। जिह्वा, ओष्ठौ, दन्ताः, नासिका – एते करणानि। यदि जिह्वाग्रस्थाने जिह्वामध्यं प्रयुज्यते – यदि ओष्ठयोः स्थाने दन्ताः प्रयुज्यन्ते – तदा करणदोषः। यथा – प, फ, ब, भ – ओष्ठ्याः – ओष्ठाभ्यां उच्चार्यन्ते। तेषां स्थाने दन्तैः उच्चारणं करणदोषः।

तृतीयः – **प्रयत्नदोषः।** प्रयत्नः द्विविधः – आभ्यन्तरः – स्पृष्ट, ईषत्स्पृष्ट, विवृत आदि। बाह्यः – विवार, संवार, श्वास, नाद आदि। यदि स्पृष्टस्थाने ईषत्स्पृष्टः – यदि नादस्थाने श्वासः – तदा प्रयत्नदोषः। यथा – अल्पप्राणस्थाने महाप्राणः – प्रयत्नदोषः। घोषस्थाने अघोषः – प्रयत्नदोषः।

एते त्रयः दोषाः स्वरे व्यञ्जने च समानरूपेण भवन्ति। अतः एते **सर्ववर्णसाधारणाः** – न केवलस्वराः, न केवलव्यञ्जनाः / एतेषां परिज्ञानं विना वर्णविज्ञानं अपूर्णम्॥

हिन्दी

वर्णों के उच्चारण में तीन मुख्य आधार होते हैं–

स्थान, करण और प्रयत्न।

ये तीनों स्वर और व्यञ्जन–दोनों में समान रूप से पाए जाते हैं। इसलिए इनके दोष भी सभी वर्णों में सामान्य होते हैं।

१. स्थानदोष

उच्चारण के स्थान होते हैं–कण्ठ, तालु, मूर्धा, दन्त और ओष्ठ। जिस वर्ण का जो स्थान निर्धारित है, यदि वहाँ से उसका उच्चारण न हो, तो स्थानदोष होता है।

उदाहरण:

"क" के स्थान पर "च" बोलना,

"त" के स्थान पर "ट" बोलना।

२. करणदोष

करण वे अंग हैं जिनसे उच्चारण होता है–जिह्वा, होंठ, दाँत, नाक आदि। यदि इनका सही उपयोग न हो, तो करणदोष होता है।

उदाहरण:

“प, फ, ब, भ” होंठों से बोले जाते हैं, यदि उन्हें दाँतों से बोला जाए, तो यह दोष है।

३. प्रयत्नदोष

प्रयत्न दो प्रकार का होता है–

आभ्यन्तर (अंदर का प्रयास) और बाह्य (बाहर का)।

यदि सही प्रकार का प्रयास न किया जाए, तो प्रयत्नदोष होता है।

उदाहरण:

महाप्राण के स्थान पर अल्पप्राण, घोष के स्थान पर अघोष बोलना।

निष्कर्ष:

ये तीनों दोष स्वर और व्यञ्जन–दोनों में समान रूप से होते हैं। इसलिए ये सभी वर्णों के सामान्य दोष हैं।

इनके बिना ज्ञान के वर्णविज्ञान पूर्ण नहीं हो सकता।

English (Clear & Structured)

In the pronunciation of sounds (varṇas), there are three fundamental bases:
Place (sthāna), organ (karaṇa), and effort (prayatna).

These three are present in both vowels and consonants. Therefore, the defects related to them are common to all sounds.

1. Place Error (Sthāna Doṣa)

The places of articulation are: throat (kaṇṭha), palate (tālu), retroflex region (mūrdhā), teeth (danta), and lips (oṣṭha).

If a sound is not pronounced from its proper place of articulation, it results in a place error.

Examples:

- Pronouncing a palatal sound “ca” in place of a guttural “ka”
- Pronouncing a retroflex “ṭa” in place of a dental “ta”

Place errors occur equally in both vowels and consonants.

2. Organ Error (Karaṇa Doṣa)

The organs of articulation include the tongue, lips, teeth, and nose. If the correct organ is not used properly in pronunciation, it leads to an organ error.

Examples:

- If the middle of the tongue is used instead of the tip
- If teeth are used instead of lips

For instance:
“pa, pha, ba, bha” are labial sounds and should be pronounced using the lips.
Using the teeth instead results in an error.

3. Effort Error (Prayatna Doṣa)

Effort is of two types:

- Internal (ābhyantara): contact, partial contact, openness, etc.
- External (bāhya): breath, voicing, expansion, contraction, etc.

If the correct type of effort is not applied, it leads to an effort error.

Examples:

- Using aspirated sound instead of unaspirated (or vice versa)
- Using voiceless instead of voiced sound (or vice versa)

Conclusion

- These three types of defects occur equally in both vowels and consonants.
  Therefore, they are **common to all sounds**, not limited to either vowels or consonants alone.
- **Without understanding these, the science of phonetics (varṇa-vijñāna) remains incomplete.**

॥ लिपि-विधि सूत्राणि ॥

सूत्र ७ – शनैरभ्यासेन वर्णलेखनं शुद्धं भवेत्, मात्रास्थानं शिरोरेखानुस्वारविसर्गसंयुक्ताक्षराणि च यथानियमं स्पष्टानि लेखनीयानि, स्वच्छपत्रस्याहार्येण च लिपिः सुदृढा भवति॥

वृत्तिः अस्मिन् सूत्रे वर्णलेखनस्य समग्रविधिः संक्षेपेण निरूपिता। **“शनैरभ्यासेन”** इति – लेखनं न शीघ्रतया, किन्तु शनैः शनैः सावधानतया पुनःपुनरभ्यासेन कर्तव्यम्। शीघ्रलेखनात् अशुद्धिः जायते, अतः धैर्येण लेखनं शुद्धेः कारणम्।

“वर्णलेखनं शुद्धं भवेत्” – प्रत्येकस्य वर्णस्य आकृतिः, रेखा, वक्रता च यथाशास्त्रं स्पष्टा लेखनीया।

“मात्रास्थानं” – ह्रस्वदीर्घादीनां मात्राणां यथोचितं स्थानं भवेत्। स्थानभ्रंशे अर्थभ्रंशोऽपि भवति।

“शिरोरेखा” – देवनागरीलिपेः मुख्यलक्षणं शिरोरेखा। सा सर्ववर्णान् संयोजयति, अतः तस्याः सम्यक् लेखनम् आवश्यकम्।

“अनुस्वारविसर्ग” – अनुस्वारबिन्दुः तथा विसर्गस्य द्वौ बिन्दू स्पष्टौ समौ च लेखनीयौ। तयोः अशुद्धलेखनात् शब्दरूपभेदः भवति।

"संयुक्ताक्षराणि" – तेषां रूपं गुरुमुखात् एव ग्राह्यम्। स्वेच्छया लेखने अशुद्धिः सम्भवति।

"यथानियमं स्पष्टानि लेखनीयानि" – सर्वाणि एतानि अवयवाः नियमानुसारं स्पष्टतया लेखनीयाः।

"स्वच्छपत्रस्याहार्येण" – लेखने प्रयुक्तं पत्रं स्याही च स्वच्छे भवेताम्, यतः अशुद्धद्रव्येण लेखनस्य सौष्ठवं न भवति।

"लिपिः सुदृढा भवति" – एवम् अभ्यासेन शुद्धविधिना च लिपिः स्थिरा, सुन्दरा च भवति।

हिन्दी : *धीरे-धीरे अभ्यास करने से वर्ण-लेखन शुद्ध होता है। मात्रा, शिरोरेखा, अनुस्वार, विसर्ग और संयुक्ताक्षर–इन सबको नियमपूर्वक और स्पष्ट लिखना चाहिए। स्वच्छ लेखन-सामग्री के प्रयोग से लिपि सुदृढ़ होती है।*

वृत्ति : इस सूत्र में वर्ण-लेखन की सम्पूर्ण विधि का संक्षेप में निरूपण किया गया है।

"शनैरभ्यासेन" – लेखन कार्य को धीरे-धीरे, सावधानीपूर्वक तथा बार-बार अभ्यास के साथ करना चाहिए। शीघ्रता से लिखा गया वर्ण प्रायः अशुद्ध हो जाता है, अतः धैर्यपूर्वक लेखन ही शुद्धता का कारण है।

"वर्णलेखनं शुद्धं भवेत्" – प्रत्येक वर्ण की आकृति, रेखा, वक्रता तथा आकार शास्त्रानुसार और स्पष्ट होना चाहिए, जिससे पाठक उसे बिना भ्रम के समझ सके।

"मात्रास्थानं" – ह्रस्व, दीर्घ आदि मात्राओं को उनके यथोचित स्थान पर ही लिखना आवश्यक है। यदि मात्रा का स्थान परिवर्तित हो जाए, तो वर्ण का रूप और अर्थ दोनों विकृत हो जाते हैं।

"शिरोरेखा" – देवनागरी लिपि का प्रमुख लक्षण शिरोरेखा है। यह सभी वर्णों को एक सूत्र में जोड़ती है, अतः इसका सम्यक् और निरन्तर लेखन आवश्यक है।

"अनुस्वारविसर्ग" – अनुस्वार का बिन्दु तथा विसर्ग के द्विबिन्दु स्पष्ट, सम और नियमानुसार लिखे जाने चाहिए। इनके लोप या अशुद्ध लेखन से शब्द का रूप बदल जाता है।

"संयुक्ताक्षराणि" – संयुक्ताक्षरों का रूप जटिल होता है, अतः उन्हें गुरु से देखकर और सीखकर ही लिखना चाहिए। स्वेच्छया लिखने से अशुद्धि की सम्भावना रहती है।

"यथानियमं स्पष्टानि लेखनीयानि" – उपर्युक्त सभी अवयवों का लेखन नियमपूर्वक, स्पष्ट और सुगठित होना चाहिए, जिससे लिपि में सौन्दर्य और शुद्धता बनी रहे।

"स्वच्छपत्रस्याहार्येण" – लेखन में प्रयुक्त कागज (पत्र) और स्याही (आहार्य) स्वच्छ और उपयुक्त होनी चाहिए, क्योंकि अशुद्ध सामग्री लेखन की स्पष्टता को प्रभावित करती है।

“लिपिः सुदृढा भवति” – इस प्रकार नियमित अभ्यास और शुद्ध विधि से लेखन करने पर लिपि स्थिर, सुन्दर और दीर्घकाल तक टिकाऊ बन जाती है।

निष्कर्ष:

यह सूत्र केवल लिखने की विधि नहीं बताता, बल्कि यह सिखाता है कि **धैर्य, नियम और अभ्यास से ही शुद्ध तथा सुन्दर लेखन सम्भव है।**

English : This aphorism briefly presents the complete method of proper writing.

“Through gradual practice” — Writing should not be done hastily, but slowly, carefully, and with repeated practice. Haste leads to errors; patience leads to correctness.

“Writing of letters should be pure” — The form, lines, and curves of each letter must be written clearly and according to standard rules.

“Proper placement of vowel signs” — Short and long vowel markers must be written in their correct positions. Misplacement leads to distortion of meaning.

“Head-line (śirorekhā)” — The headline is a defining feature of Devanagari. It connects the letters and must be written properly.

“Anusvāra and Visarga” — The dot of anusvāra and the two dots of visarga must be clear and properly placed. Incorrect usage changes the form of words.

“Conjunct letters” — Their forms should be learned directly from a teacher. Independent guessing leads to errors.

“They should be written clearly and according to rules” — All elements must be written with clarity and discipline.

“Clean writing materials” — The paper and ink used should be clean, as poor materials affect clarity.

“The script becomes firm” — With proper method and consistent practice, handwriting becomes stable, clear, and refined.

Summary: ***Practice + Precision + Discipline = Perfect Writing (Lipi Siddhi)***

॥ लिपि-दोष ॥

सूत्र ८ – वर्णलोपविपर्ययसंकरमात्रानुस्वारविसर्गसंयुक्तहलन्तस्थानदोषाः अष्ट लिपिदोषाः॥

वृत्ति : *लिपिलेखने अष्ट* दोषाः ज्ञातव्याः। एते दोषाः लिखितस्य अर्थस्य, सौन्दर्यस्य, प्रामाणिकतायाश्च विनाशकाः।

प्रथमः – **वर्णलोपः।** लेखने कस्यचित् वर्णस्य सर्वथा अभावः। यथा – "कृष्ण" स्थाने "कृण" लिखनम्। वर्णलोपेन अर्थः सम्पूर्णतया परिवर्तते।

द्वितीयः – **वर्णविपर्ययः।** वर्णानां क्रमस्य परिवर्तनम्। यथा – "धर्म" स्थाने "र्धम" लिखनम्। विपर्ययेण शब्दः अर्थहीनः भवति।

तृतीयः – **वर्णसंकरः।** सदृशवर्णयोः परस्परं मिश्रणम्। यथा – ख-घ, ध-थ, श-ष-स परस्परं लिखनम्। संकरेण पाठकः भ्रमति।

चतुर्थः – **मात्रादोषः।** मात्रायाः लोपः, आरोपणं, विपर्ययो वा। यथा – "राम" स्थाने "रम", "गीता" स्थाने "गिता"। मात्रादोषः लिपिदोषेषु सर्वाधिकः प्रचलितः।

पञ्चमः – **अनुस्वारविसर्गदोषः।** अनुस्वारस्य – "संस्कृत" स्थाने "सस्कृत"। विसर्गस्य – "रामः" स्थाने "राम"। एतयोः लोपः आरोपणं वा व्याकरणदोषः।

षष्ठः – **संयुक्तदोषः।** संयुक्ताक्षरस्य अशुद्धलेखनम्। यथा – "क्ष" स्थाने "क्ष" न लिखित्वा "छ" लिखनम्। "त्र" स्थाने "तर" लिखनम्। संयुक्तदोषः टङ्कणे अधिकतया दृश्यते।

सप्तमः – **हलन्तदोषः।** यत्र हलन्तः न देयः तत्र आरोपणम्, यत्र देयः तत्र लोपः। यथा – "राम्" स्थाने "राम", "धर्म्" स्थाने "धर्म"। हिन्दीप्रभावेण अयं दोषः संस्कृतलेखने अधिकः।

अष्टमः – **स्थानदोषः।** मात्रायाः चिह्नस्य वा अयथास्थाने लेखनम्। यथा – "ि" स्थाने "ी", अनुस्वारस्य स्थानपरिवर्तनम्। स्थानदोषेण लिपिः भ्रामिका भवति।

एते अष्ट दोषाः लिपिशुद्धेः विरोधिनः। शुद्धलिपिः एव शुद्धज्ञानस्य वाहिका। अशुद्धलिपिः परम्परायाः विनाशकारिणी॥

हिन्दी :

लिपि लेखन में आठ दोष होते हैं। ये दोष लिखित ज्ञान के अर्थ, सौन्दर्य और प्रामाणिकता – तीनों को नष्ट करते हैं।

१. वर्णलोपः लिखते समय किसी अक्षर का सर्वथा छूट जाना। **उदाहरण** – *"कृष्ण"* को *"कृण"* लिखना। **परिणाम** – अर्थ सम्पूर्णतया बदल जाता है।

२. वर्णविपर्ययः अक्षरों के क्रम का उलट जाना। **उदाहरण** – *"धर्म"* को *"र्धम"* लिखना। **परिणाम** – शब्द अर्थहीन हो जाता है।

३. वर्णसंकरः समान दिखने वाले अक्षरों का परस्पर मिश्रण। **उदाहरण** – ख-घ, ध-थ, श-ष-स को परस्पर लिखना। **परिणाम** – पाठक भ्रमित होता है।

४. मात्रादोषः मात्रा का लोप, अनावश्यक आरोपण या विपर्यय। **उदाहरण** – *"राम"* को *"रम"*, *"गीता"* को *"गिता"* लिखना। **परिणाम** – यह लिपिदोषों में सर्वाधिक प्रचलित है।

५. अनुस्वारविसर्गदोषः अनुस्वार और विसर्ग का लोप या अनुचित आरोपण। **उदाहरण** – *"संस्कृत"* को *"सस्कृत"*, *"रामः"* को *"राम"* लिखना। **परिणाम** – व्याकरण और अर्थ दोनों बिगड़ते हैं।

६. संयुक्तदोषः संयुक्ताक्षर का अशुद्ध लेखन। **उदाहरण** – *"क्ष"* को *"छ"*, *"त्र"* को *"तर"* लिखना। **परिणाम** – यह दोष टङ्कण (typing) में सर्वाधिक देखा जाता है।

७. हलन्तदोषः जहाँ हलन्त देना चाहिए वहाँ न देना – या जहाँ नहीं देना चाहिए वहाँ देना। **उदाहरण** – *"राम्"* को *"राम"* लिखना। **परिणाम** – हिन्दी के प्रभाव से संस्कृत लेखन में यह दोष अधिक होता है।

८. स्थानदोषः मात्रा या चिह्न को गलत स्थान पर लिखना। **उदाहरण** – *"ि"* के स्थान पर *"ी"* लगाना। **परिणाम** – लिपि भ्रामक हो जाती है।

उपसंहार

> *ये आठों दोष लिपि-शुद्धि के शत्रु हैं। शुद्ध लिपि ही शुद्ध ज्ञान की वाहिका है। अशुद्ध लिपि परम्परा की विनाशकारिणी है। अतः लिपिशुद्धि वर्णविज्ञान का अनिवार्य अंग है।*

English

In writing (script), there are **eight defects**. These defects destroy the **meaning, beauty, and authenticity** of written knowledge.

1. Omission of Letters (Varṇa-lopa)

When a letter is completely omitted while writing.
Example: Writing “Kṛṣṇa” as “Kṛṇa”. **Result:** The meaning is completely altered.

2. Reversal of Letters (Varṇa-viparyaya)

When the order of letters is reversed.
Example: Writing “Dharma” as “Rdhama”. **Result:** The word becomes meaningless.

3. Mixing of Letters (Varṇa-saṅkara)

Confusion between similar-looking letters.
Example: Interchanging kha–gha, dha–tha, śa–ṣa–sa. **Result:** The reader becomes confused.

4. Vowel Mark Error (Mātrā-doṣa)

Omission, incorrect addition, or misplacement of vowel signs.
Example: Writing “Rāma” as “Rama”, “Gītā” as “Gita”. **Result:** This is the most common writing error.

5. Anusvāra and Visarga Error

Omission or incorrect use of anusvāra (ṁ) and visarga (ḥ).
Example: Writing “Saṁskṛta” as “Saskṛta”, “Rāmaḥ” as “Rāma”. **Result:** Both grammar and meaning are affected.

6. Conjunct Letter Error (Saṁyukta-doṣa)

Incorrect writing of conjunct consonants.
Example: Writing “kṣa” as “cha”, “tra” as “tara”. **Result:** This error is most common in typing.

7. Halant Error

Failure to use halant where required, or using it unnecessarily.
Example: Writing “Rām” instead of “Rāma”. **Result:** This often occurs due to the influence of Hindi in Sanskrit writing.

8. Positional Error (Sthāna-doṣa)

Placing vowel marks or signs in the wrong position.
Example: Using “ī” in place of “i”. **Result:** The script becomes misleading.

Conclusion

These eight defects are enemies of correct writing. Only a pure script can carry pure knowledge. An impure script leads to the decline of tradition. Therefore, **scriptual accuracy is an essential part of phonetic science (varṇa-vijñāna).**

।। इति द्वितीयः पादः ।।

।। तृतीयः पादः ।। (कण्ठस्थ-पादः)

सूत्र १ – कण्ठस्थं द्विविधं प्रोक्तं – श्लोककण्ठस्थं सूत्रकण्ठस्थं च॥

वृत्तिः अस्मिन् सूत्रे कण्ठस्थस्य द्विविधता निरूपिता– गद्यकण्ठस्थं तथा पद्यकण्ठस्थम्।
गद्यकण्ठस्थम् *नाम यत्र वाक्यानां, अनुच्छेदानां च स्मरणं क्रियते। अत्र अर्थबोधः, वाक्यक्रमः, विचारप्रवाहश्च प्रमुखः। गद्ये निश्चिता लया न भवति, अतः स्मरणे अर्थग्रहणं क्रमबद्धता च विशेषतः अपेक्ष्येते।*

पद्यकण्ठस्थम् *नाम यत्र श्लोकानां छन्दसां वा स्मरणं भवति। अत्र शब्दस्मरणेन सह* ***छन्दः, लयः, मात्रा, उच्चारणशुद्धिः*** *इत्येतानि अपि अनिवार्याणि। एकस्यापि वर्णस्य वा मात्रायाः दोषे सति छन्दभङ्गः भवति।*

अतः गद्यपद्ययोः कण्ठस्थविधिः भिन्ना। गद्ये अर्थक्रमौ प्रमुखौ, पद्ये तु लयमात्राशुद्ध्यादयः विशेषेण ग्राह्याः।

निष्कर्षः कण्ठस्थस्य सिद्धिः तदा भवति, यदा गद्ये अर्थग्रहणं, पद्ये च लयसाम्यं सम्यक् अधीयते।
हिन्दी इस सूत्र में कण्ठस्थ (स्मरण) के दो भेद बताए गए हैं– गद्यकण्ठस्थ और पद्यकण्ठस्थ। ***गद्यकण्ठस्थ वह है जिसमें*** वाक्यों, अनुच्छेदों और विचार-क्रम का स्मरण किया जाता है। इसमें अर्थ की निरन्तरता, वाक्यरचना और विचार-प्रवाह का ध्यान रखना आवश्यक होता है। गद्य में लय निश्चित नहीं होती, इसलिए स्म***रण करते समय अर्थबोध और क्रमबद्धता प्रमुख रहती है।***

पद्यकण्ठस्थ *वह है जिसमें श्लोक, छन्द या काव्य का स्मरण किया जाता है। इसमें केवल शब्द ही नहीं, बल्कि* ***छन्द, लय, मात्रा और उच्चारण*** *का भी विशेष ध्यान रखना पड़ता है। यदि एक भी वर्ण या मात्रा में त्रुटि हो जाए, तो छन्दभंग हो जाता है।*

अतः गद्य और पद्य–दोनों के कण्ठस्थ करने की विधि भिन्न है। गद्य में ***अर्थ और क्रम*** *प्रधान हैं, जबकि पद्य में* ***लय, मात्रा और शुद्ध उच्चारण*** *का विशेष महत्व है।*

Commentary

This aphorism explains that memorization (kaṇṭhastha) is of two types: ***prose memorization*** *and* ***poetry memorization****.*

Prose memorization *involves remembering sentences, passages, and the flow of ideas. Here, emphasis is placed on* ***understanding meaning, maintaining sequence, and preserving the continuity of thought****. Since prose does not follow a fixed rhythm, correct comprehension and order are most important.*

Poetry memorization *involves memorizing verses and metrical compositions. In this case, not only the words but also* ***meter, rhythm, syllabic length, and precise pronunciation*** *must be maintained. Even a slight error in sound or quantity can disturb the meter.*

Therefore, the method of memorizing prose and poetry is different. In prose, ***meaning and sequence*** *are primary, whereas in poetry,* ***rhythm, meter, and phonetic accuracy*** *are essential.*

Conclusion

Successful memorization depends on ***grasping meaning in prose and maintaining rhythm and precision in poetry****.*

॥ खण्ड-विभाजन-विधिः ॥

सूत्र २ – सम्पूर्णं श्लोकं एकदा न पठेत्। खण्डशः विभज्य प्रत्येकं खण्डं त्रिवारं दशवारं वा पठेत्।।

हिन्दी : सम्पूर्ण श्लोक को एक ही बार में नहीं पढ़ना चाहिए। उसे भागों में विभाजित करके प्रत्येक भाग को तीन बार या दस बार पढ़ना चाहिए।

English : One should not recite the entire verse at once. It should be divided into parts, and each part should be recited three or ten times.

॥ श्रवण-पुनरावृत्ति-विधिः ॥

सूत्र ३ – गुरोः मुखात् श्रुत्वा, ध्वनिमुद्रायाः वा श्रुत्वा, उच्चारणं लयं च ज्ञात्वा, तदनुसारं पठेत्।।

हिन्दी : गुरु के मुख से सुनकर अथवा ध्वनि-रिकॉर्डिंग (ऑडियो) को सुनकर, उच्चारण और लय को समझकर उसी के अनुसार पाठ करना चाहिए।

English : One should listen to the teacher directly or to an audio recording, understand the correct pronunciation and rhythm, and then recite accordingly.

॥ अर्थज्ञान-विधिः ॥

सूत्र ४ – अर्थं ज्ञात्वा पठेत् सदा। शब्दार्थे ज्ञाते सति, श्लोकः सुखेन धार्यते।।

हिन्दी : अर्थ को जानकर ही सदैव पाठ करना चाहिए। जब शब्दों का अर्थ ज्ञात होता है, तब श्लोक को स्मरण रखना सरल हो जाता है।

English : One should always recite after understanding the meaning. When the meanings of the words are known, the verse is retained more easily.

॥ लेखन-विधिः ॥

सूत्र ५ – पठित्वा पुनः लेखनं कुर्यात्। लेखनेन शब्दाः स्मृतौ स्थायिनो भवन्ति।।

हिन्दी : पाठ करने के बाद पुनः लिखना चाहिए। लिखने से शब्द स्मृति में स्थिर हो जाते हैं।

English : After recitation, one should write it again. Writing helps the words become firmly retained in memory.

॥ नियमित-पुनरावृत्ति-विधिः ॥

सूत्र ६ – नूतनं श्लोकं पठन्नेव, पूर्वपठितानि अपि नित्यं पञ्चदिनानि दशवारं पठेत्।।

हिन्दी : नया श्लोक पढ़ते समय भी पहले से पढ़े हुए श्लोकों को प्रतिदिन पाँच दिनों तक दस बार अवश्य दोहराना चाहिए।

English : While learning a new verse, one should also revise previously learned verses daily—reciting them ten times for at least five days.

॥ लय-छन्द-विधिः ॥

सूत्र ७ – छन्दं पहचाय, निश्चितलयेन गायन् श्लोकः शीघ्रं कण्ठगो भवति।।

हिन्दी : छन्द को पहचानकर और निश्चित लय में गाते हुए श्लोक का अभ्यास करने से वह शीघ्र ही कण्ठस्थ हो जाता है।

English : By recognizing the meter and practicing the verse with a fixed rhythm (chanting), it is quickly memorized.

॥ पञ्चावृत्ति-विधिः ॥

सूत्र ८ – एकैकं सूत्रं पञ्चवारं पठेत्। पूर्वसूत्रैः सह पुनः पञ्चवारम्। एवं सर्वाणि सूत्राणि सुखेन कण्ठगानि भवन्ति।।

हिन्दी : प्रत्येक सूत्र को पाँच बार पढ़ना चाहिए। फिर उसे पूर्व के सूत्रों के साथ पुनः पाँच बार दोहराना चाहिए। इस प्रकार सभी सूत्र सरलता से कण्ठस्थ हो जाते हैं।

English : Each aphorism should be recited five times. Then it should be repeated again along with the previously learned aphorisms five times. In this way, all the aphorisms are easily memorized.

॥ एकश्वास-लघुसूत्र-विधिः ॥

सूत्र ९ – यदि बहूनि सूत्राणि लघूनि लयवन्ति च सन्ति, तदा एकेन श्वासेन सर्वाणि एकसूत्रवत् पठेत्।।

हिन्दी : यदि अनेक सूत्र छोटे-छोटे और लययुक्त हों, तो उन्हें एक ही श्वास में एक सूत्र के समान एकसाथ पढ़ना चाहिए।

English : If there are many short and rhythmic aphorisms, they should be recited together in a single breath as if they were one continuous sūtra.

॥ दीर्घसूत्र-खण्ड-विधिः ॥

सूत्र १० – यदि कश्चित् सूत्रः अतिदीर्घः, तदा तं बहुखण्डेषु विभज्य, प्रत्येकं खण्डं एकसूत्रवत् कण्ठस्थं कुर्यात्।।

हिन्दी : यदि कोई सूत्र बहुत लंबा हो, तो उसे अनेक भागों में विभाजित करके प्रत्येक भाग को एक-एक सूत्र के समान कण्ठस्थ करना चाहिए।

English : If a sūtra is very long, it should be divided into several parts, and each part should be memorized separately as if it were an individual sūtra.

॥ कण्ठस्थ विधिः ॥

सूत्र ११ – पठित्वा पुनरावृत्त्या, कण्ठस्थं कुरुते यदा । तदा विद्या स्थिरा भूत्वा, हृदि नित्यं प्रतिष्ठते ॥ यथा वेदे जटाघाने, पदानि क्रमविक्रमैः । तथा वाक्यं च पठेन्नित्यं, कण्ठस्थं दृढमुच्यते ॥ पठने शनकैः पठेत्, आवृत्तौ शीघ्रमेव च । व्यवहारे सहजं याति, तदा कण्ठस्थमुच्यते ॥

हिन्दी : बार-बार पढ़ने और आवृत्ति से कण्ठस्थ होता है। जैसे वेद में जटा-घन पाठ में पदों को आगे-पीछे पढ़ते हैं – उसी तरह वाक्य को भी। पढ़ते समय धीरे – दोहराते समय तेज – और व्यवहार में सहज निकले – तभी सच्चा कण्ठस्थ है।

English:
Through repeated reading and revision, knowledge becomes memorized. Just as in the Vedas, in Jata and Ghana recitation, words are read forward and backward, similarly sentences should also be practiced. While reading, go slowly; while repeating, go faster; and in practical use, it should flow naturally—only then is true memorization achieved.

॥ मध्यमस्वर-विधिः ॥

सूत्र १२ – न अत्युच्चैः न अतिनीचैः, मध्यमेन स्वरेण पठेत्। श्रोत्रग्राह्यं स्पष्टं च, उच्चारणं शुद्धं भवेत्।।

हिन्दी: न बहुत ऊँचे स्वर में और न ही बहुत धीमे स्वर में–मध्यम स्वर में पाठ करना चाहिए। उच्चारण ऐसा हो जो सुनने में स्पष्ट और कानों को ग्रहणीय हो, तथा पूर्णतः शुद्ध हो।

English : One should recite neither too loudly nor too softly, but in a moderate tone. The pronunciation should be clear, audible, and precise so that it is easily understood by the listener.

॥ नियमित-अभ्यास-विधिः ॥

सूत्र १३ – अल्पमल्पं पठेन्नित्यं, बहु च मनसि चिन्तयेत्। पुनरावृत्त्या ज्ञानं, दृढं स्थिरं च जायते।। यथा जलबिन्दुभिः शिला, क्रमेण छिद्यते तथा। नित्याभ्यासेन विद्या च, हृदि नित्यं प्रतिष्ठते।।

हिन्दी : प्रतिदिन थोड़ा-थोड़ा पढ़ना चाहिए और उसे मन में बार-बार चिंतन करना चाहिए। पुनरावृत्ति के द्वारा ज्ञान दृढ़ और स्थिर हो जाता है। जैसे जल की बूँदें धीरे-धीरे पत्थर को भी छेद देती हैं, उसी प्रकार निरंतर अभ्यास से विद्या हृदय में स्थिर हो जाती है।

English : One should study a little every day and reflect upon it deeply in the mind. Through repetition, knowledge becomes firm and stable. Just as drops of water gradually pierce a stone, in the same way, through constant practice, knowledge becomes firmly established in the heart.

॥ परस्परश्रावण-विधिः ॥

सूत्र १४ – कण्ठस्थे जाते सति, मित्रेभ्यः परिवाराय च। श्रावयेत् नित्यमेव, आत्मविश्वासो वर्धते।।

हिन्दी : जब श्लोक या सूत्र कण्ठस्थ हो जाए, तब उसे मित्रों और परिवार के लोगों को नियमित रूप से सुनाना चाहिए। ऐसा करने से आत्मविश्वास बढ़ता है।

English : Once a verse or sūtra is memorized, one should regularly recite it to friends and family. This helps in building confidence.

॥ लेखन विधिः ॥

सूत्र १५ – पठित्वा लेखनं कुर्यात्, हस्तेन स्वयमेव च । नेत्रहस्तमनः युक्तं, विद्या दृढतरा भवेत् ॥

हिन्दी: पढ़ने के बाद स्वयं हाथ से लिखना चाहिए। जब नेत्र, हाथ और मन एक साथ कार्य करते हैं, तब विद्या अधिक दृढ़ और स्थिर होती है।

English: After reading, one should write by hand oneself. When eyes, hands, and mind work together, knowledge becomes stronger and more firmly established.

॥ पुनः स्मरण विधिः ॥

सूत्र १६ – निद्राकाले पुनः स्मृत्वा, दिने यत् पठितं भवेत् । मनसि स्थिरतां याति, विद्या दृढतरा भवेत् ॥

हिन्दी : रात को सोते समय दिन में पढ़ी हुई बातों को पुनः स्मरण करने से मन स्थिर होता है और विद्या अधिक दृढ़ हो जाती है।

English : Recalling what was studied during the day before sleeping steadies the mind and makes knowledge more firmly established.

।। इति तृतीयः पादः ।।

।। चतुर्थः पादः ।।(*स्वाध्याय-विधि*)

सूत्र १ – गुरुसमीपे श्रुतं गृहे पुनः पुनः आवर्तनीयम्।

हिन्दी : गुरु के पास जो सुना गया हो, उसे घर पर बार-बार दोहराना चाहिए।

English : What is heard in the presence of the teacher should be repeatedly revised at home.

सूत्र २ – श्रवणानन्तरं लेखनेन अभ्यासः दृढो भवति।

हिन्दी : सुनने के बाद लिखने का अभ्यास करने से अभ्यास दृढ़ हो जाता है।

English : After listening, practicing through writing makes the learning firm and stable.

सूत्र ३ – मुखपाठः मनःपाठश्च उभौ स्वाध्याये आवश्यकौ।

हिन्दी : मुख से पाठ (उच्चारण करके पढ़ना) और मन में पाठ (मन ही मन दोहराना)—दोनों स्वाध्याय के लिए आवश्यक हैं।

English : Both oral recitation (reading aloud) and mental recitation (silent repetition) are essential for self-study.

सूत्र ४ – प्रतिदिनं स्वाध्यायेन विद्या चिरस्थायिनी भवति।

हिन्दी :प्रतिदिन स्वाध्याय करने से विद्या दीर्घकाल तक स्थिर बनी रहती है।

English : Through daily self-study, knowledge becomes long-lasting and enduring.

॥ प्रश्न विधिः ॥

***सूत्र ५ –* निःशङ्कं प्रश्नं पृच्छेत्, गुरोः सकाशमेव च । बिना प्रश्नं न विद्या स्यात्, जिज्ञासा मूलमुच्यते ॥**

हिन्दी : निर्भय होकर गुरु से प्रश्न करना चाहिए; बिना प्रश्न के विद्या संभव नहीं है, क्योंकि जिज्ञासा ही ज्ञान का मूल है।

English : One should ask questions freely to the teacher; without questioning there is no true knowledge, as curiosity is the root of learning.

॥ जिज्ञासा-विधि ॥

सूत्र ६ – विनम्रः जिज्ञासुः गुरोः प्रियो भवति।

हिन्दी :विनम्र और जिज्ञासु छात्र गुरु को प्रिय होता है।

English : A humble and inquisitive student becomes dear to the teacher.

सूत्र ७ – संशये जाते तत्क्षणं गुरुं न पृच्छेत् – विचार्य पृच्छेत्।

हिन्दी : संदेह उत्पन्न होने पर तुरंत गुरु से प्रश्न नहीं करना चाहिए; पहले स्वयं विचार करना चाहिए, फिर प्रश्न करना चाहिए।

English : When a doubt arises, one should not immediately ask the teacher; one should first reflect upon it, and then ask.

सूत्र ८ – जिज्ञासा विद्यावर्धिनी – वादो विद्यानाशिनी।

हिन्दी : *जिज्ञासा (जानने की इच्छा) विद्या को बढ़ाने वाली होती है, जबकि वाद-विवाद (अहंकारपूर्ण तर्क) विद्या को नष्ट करने वाला होता है।*

English: Curiosity enhances knowledge, whereas argumentative debate (driven by ego) destroys it.

सूत्र ९ – अनधिकृतः प्रश्नः गुरुशिष्यसम्बन्धं दूषयति।

हिन्दी : अनुचित या अधिकार के बिना किया गया प्रश्न गुरु-शिष्य सम्बन्ध को दूषित करता है।

English : An inappropriate or unauthorized question harms the teacher–student relationship.

॥ अधिकारी-विचार॥

सूत्र १० – श्रद्धावान् जिज्ञासुः गुरुभक्तः धैर्यवांश्च – एषः अधिकारी।

हिन्दी : श्रद्धा, जिज्ञासा, गुरुभक्ति और धैर्य वाला व्यक्ति ही विद्या का अधिकारी होता है।

English : A person with faith, curiosity, devotion to the guru, and patience is qualified for knowledge.

सूत्र ११ – पात्रताविहीनस्य विद्या न फलति, श्रद्धया एव विद्यायाः पात्रता सिद्ध्यति न जात्या।

हिन्दी : अयोग्य को विद्या फल नहीं देती; पात्रता जन्म से नहीं, श्रद्धा से होती है।

English : Knowledge doesn't benefit the unqualified; true eligibility comes from faith, not birth.

॥ विद्या चतुर्विधा ॥

सूत्र १२ – **स्वाध्यायः श्रवणं चैव, मननं चैकचेतसा । व्यवहारे च योजेत, चतुर्धा विद्या प्रवर्तते ॥**

हिन्दी : स्वाध्याय, श्रवण और एकाग्र मन से मनन करके तथा उसे व्यवहार में लागू करने से विद्या चार रूपों में विकसित होती है।

English : Self-study, listening, focused reflection, and practical application—through these four, knowledge becomes fully developed.

सूत्र १३ – ज्ञानस्य चत्वारः स्रोतांसि – आचार्यः, स्वबुद्धिः, सहपाठिनः, कालश्च।

वृत्ति : आचार्याद् ज्ञानं लभ्यते, स्वबुद्ध्या तस्य मननं भवति, सहपाठिभिः सह चर्चा द्वारा ज्ञानं दृढीभवति, कालेन च अनुभवः सम्यक् परिपक्वो भवति। एवं एते चत्वारः ज्ञानस्य प्रमुखाः स्रोतांसि सन्ति।

हिन्दी : ज्ञान के चार स्रोत होते हैं–आचार्य (गुरु), स्वबुद्धि (अपनी समझ), सहपाठी (साथियों से सीखना) और काल (समय व अनुभव)। इनसे ही ज्ञान का विकास होता है।

English : There are four sources of knowledge—teacher (Acharya), self-intellect, fellow learners, and time. Through these, knowledge develops and matures.

।। इति चतुर्थः पादः ।।

पाद ५ – *दैनिककार्य-पादः*

॥ शौच विधिः ॥

***सूत्र १ –*शुचिर्भूत्वा ततः पठेत्, वासांसि शुचिरेव च । अशुचिः नैव पठेत्, विद्या शुद्धे प्रतिष्ठते ॥**

हिन्दी : शुद्ध होकर ही अध्ययन करे और स्वच्छ वस्त्र पहने; अशुद्ध व्यक्ति को नहीं पढ़ना चाहिए, क्योंकि विद्या शुद्धता में ही स्थिर रहती है।

English : One should study in a state of purity and wear clean clothes; the impure should not study, as knowledge rests in purity.

॥ आसन विधिः ॥

***सूत्र २ –* आसने भूमिवर्जिते, सुखासने समासीनः । पीठे वा उपविशेत्, पादौ भूमिं न स्पृशेत् ॥ मेरुदण्डमृजुं कृत्वा, नियमेन पठेत् सदा । नादः शुद्धो भवेत् तेन, विद्या च हृदि तिष्ठति ॥ पीठासीनः अपि पादौ भूमिं न स्पृशेत् ॥**

हिन्दी : आसन पर बैठो भूमि से रहित – या कुर्सी पर – पर पाँव भूमि को न छुए। मेरुदण्ड को सदा सीधा रखकर नियम से पढ़े – तभी नाद शुद्ध होगा और विद्या हृदय में स्थित होगी।

English: Sit on a seat elevated from the ground—or on a chair—but keep your feet from touching the ground. Keep the spine straight and study with discipline; only then will the sound be pure, and knowledge will settle in the heart.

॥ आहार विधिः ॥

***सूत्र ३ –* भुक्त्वा तु तत्क्षणे विद्या, क्षुधार्तो वा न पठेत् सदा । मध्यमे उदरे शान्ते, तदा विद्या प्रवर्तते ॥**

हिन्दी : खाने के तुरंत बाद या भूखे होने पर अध्ययन न करें; जब उदर मध्यम और शांत हो, तभी विद्या ठीक से चलती है।

English : One should not study immediately after eating or when hungry. When the stomach is neither full nor empty but in a balanced and calm state, then knowledge flows properly.

॥ काल दिशा विधिः ॥

***सूत्र ४ –* ब्राह्मे मुहूर्ते उत्थाय, प्राङ्मुखः शुचिरेव च । शान्तमनाः समासीनः, तदा विद्याम् अधीयते ॥**

हिन्दी : ब्राह्म मुहूर्त में उठकर, पूर्वमुख होकर, शुद्ध और शांत मन से बैठकर अध्ययन करना चाहिए।

English : Rise in the Brahma Muhurta, sit facing east, pure and calm, and then study.

॥ एकान्त विधिः ॥

***सूत्र ५ –* एकान्ते शान्तदेशे च, विना कोलाहलेन च । चित्तं स्थिरं भवेत् तत्र, विद्या हृदि प्रविशति ॥**

हिन्दी : एकान्त और शांत स्थान में, बिना शोर के पढ़ें; वहाँ मन स्थिर होता है और विद्या हृदय में प्रवेश करती है।

English : Study in a quiet, secluded place without noise; there the mind becomes steady and knowledge enters the heart.

॥ विद्यारम्भ विधिः ॥

***सूत्र ६ –* विद्यादेवीं गुरुं नत्वा, विनम्रेण चेतसा । शास्त्रनाम उच्चार्य, तदा विद्याम् अधीयते ॥**

हिन्दी : विद्या देवी और गुरु को विनम्र मन से प्रणाम करके तथा शास्त्र का नाम लेकर अध्ययन आरम्भ करना चाहिए।

English : One should begin study by humbly bowing to the Goddess of Knowledge and the teacher, and by uttering the name of the scripture.

सूत्र ७ – विद्यारम्भे त्रिवारं प्रणवमुच्चारयेत्, विद्यासमाप्तौ एकवारम्॥

हिन्दी : विद्या आरम्भ करते समय तीन बार प्रणव (ॐ) का उच्चारण करना चाहिए और समाप्ति पर एक बार।

English : At the beginning of study, the Pranava (Om) should be chanted three times, and once at the end.

॥ प्रणव उच्चारण विधिः (पठन हेतु) ॥

***सूत्र ८ –* नाभेरारभ्य संगृह्य, त्रिमात्रं दीर्घमुच्चरेत् । नासिक्येन समापय्य, मौनं क्षणं समाचरेत् ॥ स्पन्दनं देहमाश्रित्य, एकाग्रेण चेतसा । शास्त्रारम्भे च अन्ते च, प्रणवं नित्यमुच्चरेत् ॥**

हिन्दी :नाभि से आरम्भ कर दीर्घ प्रणव का उच्चारण करें, नासिका से समाप्त करके क्षणभर मौन रहें। शरीर में स्पन्दन स्थिर कर एकाग्र मन से शास्त्र के आरम्भ और अंत में प्रणव का नित्य उच्चारण करें।

English : Begin from the navel and chant the long Pranava (Om), ending through the nose and observing a brief silence. With bodily stillness and a focused mind, always chant Pranava at the beginning and end of study

॥ शास्त्र समाप्ति विधिः ॥

सूत्र ९ – पठित्वा शास्त्रमादृत्य, यथास्थाने निधापयेत् । विद्यादेवीं ततो नत्वा, कृतज्ञः शिष्य उच्यते ॥

हिन्दी : शास्त्र पढ़कर उसे उचित स्थान पर समझकर स्थापित करना चाहिए। विद्या देवी को प्रणाम करके कृतज्ञ शिष्य बनना चाहिए।

English : After studying the scripture, one should properly understand and retain it. By bowing to the Goddess of Knowledge, one becomes a grateful disciple.

॥ शिष्य धर्मः ॥

सूत्र १० – सहपाठिभिः विचारं च, शङ्काः गुरोः समर्पयेत् । विद्यादानं गुरोः कार्यं, शिष्यो नैव प्रवर्तते ॥

हिन्दी : सहपाठियों के साथ विचार करें और शंका को रु के समक्ष रखें। विद्या का दान गुरु का कार्य है, शिष्य स्वयं ज्ञान नहीं देता।

English : Discuss with fellow students and present doubts to the teacher. Teaching knowledge is the teacher's duty; the student does not impart knowledge.

॥ आहार ब्रह्मचर्य विधिः ॥

सूत्र ११ – सात्त्विकाहारसम्पन्नः, ब्रह्मचर्यव्रतेन च । इन्द्रियाणां जये युक्तः, तदा विद्या प्रकाशते ॥

हिन्दी : जो सात्त्विक आहार करता है, ब्रह्मचर्य का पालन करता है और इन्द्रियों को वश में रखता है, उसी में विद्या प्रकाशित होती है।

English : Knowledge shines in one who follows a pure (sattvic) diet, practices celibacy, and has control over the senses.

॥ औषधि विधिः ॥

सूत्र १२ – मन्दमेधाय विहिता, ब्राह्मीशङ्खपुष्प्यादिका । मेधावर्धनकाः प्रोक्ताः, विद्याग्रहणहेतवे ॥

हिन्दी : मन्द बुद्धि वालों के लिए ब्राह्मी, शंखपुष्पी आदि औषधियाँ बताई गई हैं, जो बुद्धि बढ़ाने वाली और विद्या ग्रहण में सहायक होती हैं।

English : For slow intellect, herbs like Brahmi and Shankhpushpi are prescribed, which enhance intelligence and help in the absorption of knowledge.

॥ आसन प्राणायाम विधिः ॥

सूत्र १३ – आसनाभ्यासयुक्तेन, प्राणायामेन संयुतः । चित्तं स्थिरं भवेत् तेन, विद्या हृदि प्रतिष्ठते ॥

हिन्दी : आसन और प्राणायाम के अभ्यास से मन स्थिर होता है और विद्या हृदय में स्थापित होती है।

English : With the practice of asana and pranayama, the mind becomes steady and knowledge is established in the heart.

॥ सहपाठि विधिः ॥

सूत्र १४ – सहपाठिभिः सह पठेत्, परस्परं च बोधयेत् । प्रश्नोत्तरैः च संवादैः, विद्या शीघ्रं प्रतिष्ठते ॥

हिन्दी : सहपाठियों के साथ पढ़ें और एक-दूसरे को समझाएँ। प्रश्नोत्तर और संवाद से विद्या शीघ्र स्थिर होती है।

English : Study with fellow students and explain to each other. Through questions, answers, and discussion, knowledge is quickly established.

॥ विश्राम विधिः ॥

सूत्र १५ – न अतिपठनं कुर्यात्, मध्ये विश्रामयेत् सदा । श्रान्तं चित्तं न गृह्णाति, विश्रान्ते विद्या तिष्ठति ॥

हिन्दी : अधिक देर तक लगातार न पढ़ें, बीच-बीच में विश्राम करें; थका हुआ मन ज्ञान नहीं ग्रहण करता, विश्राम से विद्या स्थिर होती है।

English : Do not study excessively without breaks; rest in between. A tired mind cannot absorb knowledge, but with rest, learning becomes stable.

॥ नियमित अभ्यास विधिः ॥

सूत्र १६ – अल्पमल्पं पठेन्नित्यं, न एकदा बहु पठेत् । नित्याभ्यासेन विद्या स्यात्, सरिद्वत् प्रवहेत् सदा ॥

हिन्दी : थोड़ा-थोड़ा प्रतिदिन पढ़ना चाहिए, एक साथ अधिक नहीं। निरंतर अभ्यास से विद्या नदी की तरह सतत प्रवाहित होती है।

English : One should study a little every day rather than all at once. With regular practice, knowledge flows continuously like a river.

॥ विद्या चतुर्विधा ॥

सूत्र १७ **– स्वाध्यायः श्रवणं चैव, मननं चैकचेतसा । व्यवहारे च योजेत, चतुर्धा विद्या प्रवर्तते ॥**

हिन्दी : स्वाध्याय, श्रवण और एकाग्र मन से मनन करके तथा उसे व्यवहार में लागू करने से विद्या चार रूपों में विकसित होती है।

English : Self-study, listening, focused reflection, and practical application—through these four, knowledge becomes fully developed.

॥ विद्या चतुष्टयम् ॥

सूत्र १८ **– आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता, दण्डनीतिश्च चतुर्थमा । चतसृष्वेव विद्यासु, सर्वविद्याः प्रतिष्ठिताः ॥**

वृत्ति

कौटिल्येन चाणक्येन अर्थशास्त्रे उक्तम् – सर्वाः विद्याः चतसृषु विद्यासु अन्तर्भूताः।

प्रथमा – **आन्वीक्षिकी**। तर्कस्य विद्या – न्यायः, वैशेषिकः, सांख्यः, योगः, लोकायतश्च। यया बुद्धिः शुद्ध्यति, सत्यासत्यविवेकः जायते – सा आन्वीक्षिकी।

द्वितीया – **त्रयी**। ऋक्, साम, यजुः – त्रयो वेदाः। धर्मस्य, कर्मणः, ज्ञानस्य च मूलम्। वर्णविज्ञाने – वेदपाठस्य शुद्धता त्रय्याः अनुशासनम्।

तृतीया – **वार्ता।** कृषिः, वाणिज्यः, पशुपालनम् – जीवनस्य व्यावहारिकः पक्षः। अर्थस्य उपार्जनस्य विद्या। वर्णविज्ञाने – व्यवहारपादः वार्तायाः अन्तर्गतः।

चतुर्थी – **दण्डनीतिः।** राज्यस्य शासनस्य, न्यायस्य, व्यवस्थायाः विद्या। समाजे धर्मस्य रक्षणाय दण्डनीतिः अनिवार्या। वर्णविज्ञाने – भाषाशुद्धेः नियमाः दण्डनीत्याः स्वरूपम्।

एतासु चतसृषु विद्यासु सर्वाः विद्याः अन्तर्भवन्ति – वर्णविज्ञानमपि एतासु एव प्रतिष्ठितम्॥

हिन्दी:

कौटिल्य (चाणक्य) के अर्थशास्त्र के अनुसार सभी विद्याएँ चार प्रमुख विद्याओं में समाहित हैं–

१. **आन्वीक्षिकी** – न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग और लोकायत जैसी तर्कविद्या। यह बुद्धि को शुद्ध करती है और सत्य-असत्य का विवेक कराती है।

२. **त्रयी** – ऋक्, साम और यजुर्वेद। यह धर्म, कर्म और ज्ञान का मूल है।

३. **वार्ता** – कृषि, वाणिज्य और पशुपालन की व्यावहारिक विद्या, जो जीवनयापन और अर्थ उपार्जन

से जुड़ी है।

४. **दण्डनीति** – राज्य शासन, न्याय और व्यवस्था की विद्या, जो समाज में धर्म की रक्षा करती है।

इन चारों विद्याओं में समस्त ज्ञान समाहित है। वर्णविज्ञान भी इन्हीं के अंतर्गत प्रतिष्ठित माना गया है।

English:

According to Kautilya (Chanakya) in the Arthashastra, all branches of knowledge are included within four main sciences—

1. **Anvīkṣikī** — the science of logic and reasoning, including Nyaya, Vaisheshika, Samkhya, Yoga, and Lokayata. It purifies intellect and enables discrimination between truth and falsehood.

2. **Trayi** — the three Vedas: Rig, Sama, and Yajur. It is the foundation of dharma, action, and knowledge.

3. **Vārta** — practical sciences such as agriculture, trade, and animal husbandry, related to livelihood and wealth creation.

4. **Daṇḍanīti** — the science of governance, justice, and administration, which upholds order and righteousness in society.

All forms of knowledge are contained within these four sciences. Even Varna Vigyan is considered to be established within them.

॥ वर्णमूलम् ॥

***सूत्र १९* – वाक्यस्य मूलं तु पदं, पदस्य मूलं तु वर्णकम् । वर्णशुद्धौ पदं शुद्धं, पदशुद्धौ च वाङ्मयम् ॥**

हिन्दी : वाक्य का मूल पद है, पद का मूल वर्ण है। वर्ण शुद्ध होने पर पद शुद्ध होता है, और पद शुद्ध होने पर सम्पूर्ण वाणी शुद्ध हो जाती है।

English : The root of a sentence is the word, and the root of a word is the letter. When letters are pure, words become pure, and from pure words comes pure expression.

॥ परब्रह्म प्राप्तिः ॥

***सूत्र २०* – परब्रह्म जिज्ञासुना, शब्दब्रह्म विजानताम् । वर्णस्थानं प्रयत्नं च, करणं मात्रमेव च ॥ सम्यक् ज्ञातव्यमेतेषां, तदा ब्रह्म प्रकाशते । वर्णशास्त्रमिदं तस्मात्, सर्वविद्यासु मूलकम् ॥**

हिन्दी : जो परब्रह्म का जिज्ञासु है, वह शब्दब्रह्म को जानता है। वर्णों का स्थान, प्रयत्न, करण और मात्रा को ठीक से समझना आवश्यक है। जब इनका सम्यक् ज्ञान होता है, तभी ब्रह्म का प्रकाश होता है। इसलिए यह वर्णशास्त्र सभी विद्याओं का मूल है।

English : One who seeks the Supreme Brahman understands the Brahman of sound (Shabda Brahman). The place of articulation, effort, instrument, and duration must be properly known. When these are correctly understood, Brahman is revealed. Therefore, the science of letters is the root of all knowledge.

सूत्र २१ – वर्णशिक्षाग्रन्थैः सह अयं ग्रन्थः पठनीयः।

हिन्दी : *इस ग्रंथ का अध्ययन वर्णशिक्षा के अन्य ग्रंथों के साथ करना चाहिए।*

English : *This text should be studied along with other works on Varna Shiksha (phonetics/letter science).*

एकीकृत सूत्र (ग्रन्थ-वर्णन):

सूत्र २२ – गुरु-महिमापादः, उच्चारण-पादः, कण्ठस्थ-पादः, स्वाध्याय-विधि-पादः, दैनिककार्य-पादः, — एते पञ्च पादाः वर्णविज्ञान-शिक्षार्थि-सूत्रस्य मूलाधाराः सन्ति।

हिन्दी : वर्णविज्ञान-शिक्षार्थि-सूत्र में पाँच पाद हैं–गुरु महिमा, उच्चारण, कण्ठस्थ, स्वाध्याय विधि और दैनिक कार्य–जो अध्ययन की पूर्ण आधारभूमि हैं।

English (Short): The Varna Vigyan Shiksharthi Sutra consists of five sections—Guru importance, pronunciation, memorization, self-study method and daily practice—which form the complete foundation of learning.

।। इति पञ्चमः पादः ।।

Bibliography

(1) **Maharshi Dayananda Saraswati,** ***Varnoccharan Shiksha (वर्णोच्चारण शिक्षा)*****, Ram Lal Kapoor Trust, 2009. Adi Shankaracharya**

(2) *Vivekachudamani*. गीता प्रेस, गोरखपुर .

(3) **Manusmriti (Manava Dharmashastra)**
Translations and commentaries by various scholars. Standard editions include G. Bühler (Sacred Books of the East), Motilal Banarsidass publication.

(4) **Mandukya Upanishad** With commentaries of Adi Shankaracharya. Published Motilal Banarsidass, Delhi.

ॐ

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

वर्णाविज्ञाने शिक्षार्थी-सूत्रम्

यह ग्रन्थ वर्णविज्ञान के सिद्धान्तों को व्यवहार में लाने हेतु रचा गया है। इसमें वर्णों के उच्चारण, उनकी उत्पत्ति, भेद, प्रयोग तथा ध्वनि के वैज्ञानिक पक्ष को सरल और सुगठित रूप में ९२ श्लोकों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। यह ग्रन्थ विद्यार्थियों, अध्यापकों तथा भाषा विज्ञान, संस्कृत, वैदिक अध्ययन और वाणी-शुद्धि के साधकों के लिए विशेष उपयोगी है।

❖ ग्रन्थ की विशेषताएँ ❖

- वर्णविज्ञान का अनुप्रयुक्त (Applied) स्वरूप
- ९२ श्लोकों में सारगर्भित प्रस्तुति
- उच्चारण-शुद्धि एवं ध्वनि-विज्ञान पर विशेष बल
- विद्यार्थियों एवं शोधार्थियों के लिए उपयोगी
- सरल भाषा, सुबोध शैली और व्यावहारिक दृष्टिकोण

रचयिताः

॥ निरर्वजन प्रधानः ॥

प्रकाशकः

विक्रमसंवत् २०८२-८३

ISBN 978-93-XXXX-XXX-X

ओडिशा, भारत